

पं. राधेश्याम कथावाचक
सफ़र एक सदी का

हरि शंकर शर्मा



पं. राधेश्याम कथावाचक एक व्यक्ति नहीं संस्था थे। काशी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी ने उनकी शताब्दी वर्ष पर 16 जनवरी 1991 ई. में भव्य आयोजन किया था। इस कार्यक्रम के उद्घाटन अवसर पर प्रसिद्ध साहित्यकार क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने कहा था- "यह आयोजन श्राद्ध-यज्ञ है। आज पं. राधेश्याम कथावाचक को कथाजगत भूल चुका है। उनके नाटकों ने साहित्यिक व धार्मिक जगत में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने हिन्दी को नाटकों के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। नाटक जब अपनी शैशवावस्था में था तब आपने पारसी नाट्य के जरिये नयी सांस्कृतिक चेतना विकसित की जो व्यवसायिक नाटकों में नहीं था।"

वे केवल कथावाचक, नाटककार कवि और लेखक नहीं थे, बल्कि वे अपने को हर कसौटी पर कसने की प्रतिभा रखते थे। पारसी नाटक के तीन मोड़ हैं - आगा हश्र कश्मीरी (वाराणसी), पं. रामनारायण बेताव (इलाहाबाद) तथा राधेश्याम कथावाचक (बरेली)। राधेश्याम कथावाचक शताब्दी समारोह के अवसर पर आगा हश्र कश्मीरी के भतीजे आगा जमाल कश्मीरी ने कहा था– "हमारे पूर्वज एवं श्री कथावाचक जी का नाटककाल एक ही है। कथावाचक से पूर्व श्री आगा हश्र धार्मिक पौराणिक नाटक लिख चुके थे। भक्त सूर उनका पहला नाटक सन् 1914 में लिखा गया। हिन्दी ड्रामा को तारीखवार लिखे बिना उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।"

पं. राधेश्याम कथावाचक
सफ़र एक सदी का

पं. राधेश्याम कथावाचक
सफ़र एक सदी का

लेखक

हरिशंकर शर्मा

प्रकाशक

कार्तिक प्रकाशन

बी-45, गणेश कॉलोनी, पिलानी-333031

ISBN : 978-81-926625-8-9

प्रकाशक : **कार्तिक प्रकाशन**
बी-45, गणेश कॉलोनी
पिलानी-333031 (राज.)
दूरभाष : 01596-245518
मूल्य : 200.00
संस्करण : प्रथम, 2014
कम्पोजिंग : आइडियल कम्प्यूटर सेन्टर, जयपुर
मुद्रक : एस.एम. अंसारी प्रिन्टर्स, दिल्ली-6

Pandit Radheyshyam Kathavachak : Safar Ek Sadi Ka

By Harishankar Sharma

❊ समर्पण ❊

पूज्य माता जी (स्व.) कमला देवी
को
समर्पित

लेखक की प्रेरणा
पुत्री अंजलि शर्मा

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

शुभकामना

मुझे अपने किशोरावस्था के दिनों का आज स्मरण हो आ रहा है। उन दिनों आकाशवाणी रेडियो पर एक खनकदार सुरीली आवाज गूँजती हुई, खड़ी बोली हिन्दी में, रामकथा का गायन करती थी। खड़ी बोली में उस रामकथा को सुनना, जिसे कभी गोस्वामी तुलसीदास जी ने 'रामचरितमानस' में अवधी में लिखकर जन-जन तक अनेक शताब्दी पूर्व पहुँचा दिया था, हमें उसके पीछे श्रवण मात्र से ही रोमांचित कर देता था। उसके पीछे दो कारण थे। एक तो हिन्दी भाषा का यह स्वरूप हमारे दैनिक व्यवहार की भाषा में होने के कारण नितांत सुपरिचित था। इसलिए इसका अर्थ आसानी से समझ में आता था। दूसरे इसके रचयिता एवं गायक का वह जादुई स्वर जो सीधा हृदय के भीतर समा जाता था। ऐसी महान विभूति से हमारा परिचय पं. राधेश्याम कथावाचक के रूप में तब रेडियो के माध्यम से हुआ था। उनकी 'राधेश्याम रामायण' उन दिनों इतनी लोकप्रिय थी कि क्या कहने।

श्री हरिशंकर शर्मा की प्रस्तुत कृति 'पण्डित राधेश्याम कथावाचक : सफर एक सदी का' अनेक अर्थों में विलक्षण एवं महत्त्वपूर्ण है। कम से कम मेरे जैसे अल्पज्ञ पंडित राधेश्याम कथावाचक जी को अभी तक रामकथा के आधुनिक गायक के रूप में ही जानते थे, परन्तु यह पुस्तक पंडित जी के बहुआयामी विशाल व्यक्तित्व को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती है। पंडित राधेश्याम कथावाचक सम्पादकाचार्य, नाटककार, कवि, भक्त एवं अद्भुत व्यक्तित्व के धनी महापुरुष थे। यह कृति उनके जीवन, कृतित्व और विचारों को बहुत सहज एवं व्यवस्थित ढंग से हमारे सामने उद्घाटित करती है।

पं. राधेश्याम कथावाचक के जीवन चरित्र को विभिन्न अध्यायों में समेटे यह दुर्लभ ग्रन्थ एक पूरे युग को जीवन्तता के साथ हमारे सामने लाता

है। इसमें युगीन गतिविधियाँ, तत्कालीन राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक परिदृश्य, अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति और उनकी भूमिकाएं बड़ी खूबसूरती और समग्रता के साथ इसमें स्पन्दित दिखती हैं।

पं. राधेश्याम कथावाचक को रामकथा के अप्रतिम गायक के रूप में अधिकांश लोग जानते हैं, परन्तु उनके कृष्ण-भक्तिमय कवि स्वरूप को भी लेखक अत्यंत कुशलता से यहाँ प्रकट किया है। साथ ही हरिशंकर शर्मा जी तत्कालीन स्वाधीनता आन्दोलन से पंडित राधेश्याम जी के प्रबन्ध काव्य 'कृष्णायन' को और प्रकारान्तर से उनके काव्य सृजन को युगीन संदर्भों में भी इन शब्दों में रेखांकित करते हैं –

"कृष्णायन प्रबन्ध काव्य है। कथावाचक जी ने इसमें लोकतंत्र के नायक गांधी को जन-जन का प्रतीक मानकर उनकी तुलना श्रीकृष्ण से की है। अभियन्ता में एकता लोकतंत्र का प्राण है। "कृष्ण वहीं बसते हैं, जहाँ मैं-तू का झगड़ा न हो।" सभी जानते हैं भारतीय राजनीति जेल की सलाखों के पीछे पुष्ट हुई है। जेल में श्रीकृष्ण का जन्म, देवकी-वसुदेव की यातनाएँ, कंस साम्राज्य, कंस वध आदि कथा प्रसंग ब्रिटिश साम्राज्य के अत्याचारों की याद दिलाते हैं। कंस का राज्य ही ब्रिटिश साम्राज्य है। भारतमाता की आजादी के लिए गरम दल, नरम दल ने अपने-अपने तरीके से लड़ाई लड़ी। दोनों का लक्ष्य एक ही था - आजादी। लेकिन गांधी की नीतियाँ उसकी चूले हिलाने में कामयाब रहीं।"

इस प्रकार लेखक श्री हरिशंकर शर्मा जी ने बीती शताब्दी के एक सुविख्यात संस्कृतिकर्मी पं. राधेश्याम कथावाचक के जीवन-चरित्र पर आधारित यह शोधपरक एवं अत्यंत उपादेय ग्रंथ रचा है। भारत के इतिहास की कड़ी में भी निश्चित रूप से यह एक अत्यंत पठनीय एवं संग्रहणीय कृति है। इसके लिए लेखक को हृदय से मेरा साधुवाद।

लखनऊ।

17 दिसम्बर, 2013

डॉ. सुधाकर अदीब
निदेशक
उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

दो शब्द

मैं सम्पादकाचार्य, नाटककार, कवि, कथावाचक, राम एवं कृष्णभक्त पं. राधेश्याम कथावाचक को सदी का सफ़र के रूप में इस विभूति को पुस्तक रूप में प्रकाशित करके उन पर कोई उपकार नहीं कर रहा हूँ। हम अतीत से वर्तमान एवं भविष्य का मार्ग प्राप्त करते हैं। पं. राधेश्याम कथावाचक ने मिशनरी भावना पर बल देते हुए अपने सृजन को राष्ट्रीयता से जोड़ा। इसीलिए वे मालवीय जी जुड़े। उन्होंने राष्ट्रीयता के मार्ग में आने वाले ख़तरों की आहट को सुनकर सृजन किया। वर्तमान में भी उनका महत्त्व कम नहीं हुआ है। उन्होंने पत्रकारिता एवं सृजन को आयाम देने के उद्देश्य से राधेश्याम प्रेस को 1921 ई. में स्थापित किया। प्रेमचंद ने काशी से हंस मासिक का श्रीगणेश मार्च 1930 ई. में किया। उन्होंने हंस के प्रथमांक में 'भ्रमर' के महत्त्व को स्वीकार किया है- "हमारे अथक प्रयास के अलावा इस ग्राहक वृद्धि का एक बहुत बड़ा सा कारण यह है कि बरेली से प्रकाशित भ्रमर के ग्राहक भी हमें मिल गये हैं।" उस समय भ्रमर की पच्चीस हजार प्रतियाँ प्रकाशित होती थीं। भ्रमर को पं. राधेश्याम कथावाचक; पं. गोपी वल्लभ शास्त्री; प्रवासी लाल वर्मा; सतीश कुमार; उदयशंकर भट्ट एवं रामनारायण जैसे सम्पादक इसी युग में मिले। भ्रमर के सन् 1930 तक प्रकाशन की सूचना है।

पं. राधेश्याम कथावाचक एक व्यक्ति नहीं संस्था थे। काशी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी ने उनकी शताब्दी वर्ष पर 16 जनवरी 1991 ई. में भव्य आयोजन किया था। इस कार्यक्रम के उद्घाटन

अवसर पर प्रसिद्ध साहित्यकार क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने कहा था- "यह आयोजन श्राद्ध-यज्ञ है। आज पं. राधेश्याम कथावाचक को कथाजगत भूल चुका है। उनके नाटकों ने साहित्यिक व धार्मिक जगत में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने हिन्दी को नाटकों के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। नाटक जब अपनी शैशवावस्था में था तब आपने पारसी नाट्य के जरिये नयी सांस्कृतिक चेतना विकसित की जो व्यवसायिक नाटकों में नहीं था।"

कथावाचक जी ने राम कथा के माध्यम से भारत में खड़ी बोली में रामकथा की रचना करके उसे लोकप्रिय बनाया। कथावाचक की अनूठी शैली के कारण उन्होंने अपने नाम के आगे 'कथावाचक' शब्द जोड़ा– "जब मैंने होश संभाला तो रंग बदला हुआ था। चौबोला लावनियाँ आदि का चलन था। भाषा मिली-जुली, गिरी-पड़ी, मिश्रित और सरल थी। इसके पश्चात् महावीर प्रसाद द्विवेदी ने उमंगें बढ़ा दीं......... मेरी रामायण सामायिक भाषा में होने के कारण चल पड़ी। 'कथा' और 'वाचक' दोनों को मिलाकर "कथावाचक" मैंने ही अपनाया और राधेश्याम के आगे जोड़ लिया। गुरुपूर्णिमा संवत् 2011 (मेरा नाटक काल से)

वे केवल कथावाचक, नाटककार कवि और लेखक नहीं थे, बल्कि वे अपने को हर कसौटी पर कसने की प्रतिभा रखते थे। पारसी नाटक के तीन मोड़ हैं - आगा हश्र कश्मीरी (वाराणसी), पं. रामनारायण बेताव (इलाहाबाद) तथा राधेश्याम कथावाचक (बरेली)। राधेश्याम कथावाचक शताब्दी समारोह के अवसर पर आगा हश्र कश्मीरी के भतीजे आगा जमाल कश्मीरी ने कहा था– "हमारे पूर्वज एवं श्री कथावाचक जी का नाटककाल एक ही है। कथावाचक से पूर्व श्री आगा हश्र धार्मिक पौराणिक नाटक लिख चुके थे। भक्त सूर उनका पहला नाटक सन् 1914 में लिखा गया। हिन्दी ड्रामा को तारीखवार लिखे

बिना उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।'' आगा हश्र के नाटकों में अरबी-फारसी-उर्दू का चलन था। राधेश्याम कथावाचक ने लोकप्रचलित नाट्य शैलियों के आधार पर खड़ी बोली में नाटक लिखे। उन्होंने पारसी मंच की आयी अश्लीलता को दूर एवं परिष्कृत किया तब लोगों ने समझा कि घर की स्त्रियों के साथ भी नाट्यशाला जाया जा सकता है। अत: वे पुनरुत्थानवादी नाटककार हैं। वीर अभिमन्यु नाटक उनका चर्चित नाटक है। वह देश की युवाशक्ति का प्रतीक है। उस समय का क्रान्तिकारी युवा अंग्रेजी साम्राज्य के चक्रव्यूह तोड़ने की बार-बार चेष्टा करते हैं, लेकिन उन्हे एक-एक करके अभिमन्यु की तरह वीरगति मिली। उस समय का दु:शासन और दुर्योधन का प्रतीक अहितकर नीतियाँ ही धृतराष्ट्र हैं। उस समय की दासता से संघर्ष करता हुआ देश को युवावर्ग ही अभिमन्यु है और उस समय की परिस्थितियाँ चक्रव्यूह। राधेश्याम जी का रचना काल प्रसाद से पूर्व का है, दोनों के ही विषय पौराणिक और ऐतिहासिक हैं। लेकिन नाटक के इतिहास में राधेश्याम जी का समुचित मूल्यांकन होना आज भी शेष है। उन्हे पारसी नाटक के चौखटे से बाहर निकालने की आवश्यकता है।

पद्मश्री चिरंजीत की मान्यता है– 'पारसी थियेटर शब्द हिन्दू साहित्यकारों की घृणित भावनाओं से उपजा है। इस स्थिति में उनका नाटक और कथावाचक का व्यक्तित्व एक-दूसरे के पूरक हैं। वे पारसी मंच के लिए ही लिखते थे। यह बात दूसरी है कि हिन्दी-मंच के साथ उसका विरोधाभास है।''

राधेश्याम कथावाचक ने अपने जीवन के अन्तिम समय में पीतवस्त्र पहनना शुरू कर दिया था; किन्तु वे संन्यासी नहीं थे। उन्होंने वैभवपूर्ण जीवन जिया। वे रचनाकारों के मध्य मार्तण्ड हैं। राधेश्याम कथावाचक की प्रेरणा से ही - पं. रामनारायण पाठक; राम सहाय तमन्ज; शंकर सहाय; मुंशी मथुराप्रसाद मधुरेश कवि; पं. बाँकेलाल जी

महाराज; श्रीमती प्रियंवदा श्रीवास्तव; श्री 108 स्वामी रामदास; जगन्नाथ मिश्र 'कमल'; जगेश्वर लाल वर्मा; पं. मदन मोहन लाल; पं. ज्वाला प्रसाद; उदयशंकर भट्ट; प्रवासी लाल वर्मा; नारायण गोस्वामी तथा गोपीवल्लभ उपाध्याय आदि प्रतिभाएँ उसी युग में चमकीं।

पं. राधेश्याम कथावाचक केवल रामभक्त ही नहीं कृष्ण-भक्त भी हैं। उन्होंने 'कृष्णायन' ग्रंथ लिखकर कृष्णायन परम्परा को समृद्ध किया है। हिन्दी साहित्य में पहला कृष्णायन ग्रंथ कवि मंचित ने लिखा है। इसके अतिरिक्त खुमान (सं. 1938); जगन्नाथ दास (सं. 1845); बिहारीदास (सं. 1928); बसन्त महाराज (सं. 1942); पं. राधेश्याम कथावाचक (सं. 1987); पं. रामस्वरूप विशद (सं. 1928); पं. द्वारिकाप्रसाद मिश्र (सं. 2025) तथा बाबूराम (सं. 2027) ने कृष्णायन ग्रंथ रचे हैं। गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्री कृष्णांक (सन् 1931) में पं. राधेश्याम कथावाचक कृत कृष्णायन जन्माष्टी कथा खण्ड की कविता प्रकाशित की थी। यहाँ केवल कृष्णावतार की आवश्यकता एवं परिस्थितियों का चित्रण ही नहीं परतंत्र भारत की कालिमा का चित्रण बिम्ब रूप में – 'नीचे रक्त सागर था लाल, जिसमें सृष्टि धंस रही थी।' कृष्णायन प्रबन्ध काव्य है और श्रीकृष्ण गाँधी का प्रतीक।

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी में पं. राधेश्याम कथावाचक जन्मशती के अवसर बेढ़व बनारसी के किसी रिश्तेदार ने कथावाचक जी पर एक ग्रंथ प्रकाशन की चर्चा की थी। पं. सुधाकर जी ने इस अवसर पर स्पष्ट रूप में कहा था– 'अधकचरे लोग क्या ग्रंथ तैयार करेंगे। सभी की योजना है कि अनुभवी लोगों से कुछ कार्य कराया जाए। मैंने कई बार नागरी पत्रिका का विशेषांक पं. राधेश्याम कथावाचक पर निकालने की प्रार्थना की थी। पता नहीं, अंक निकला या नहीं ? उनकीं मृत्यु के पश्चात् नागरी प्रचारिणी सभा मुझे अज़नबी सी लगने लगी। अतः उन्हीं की प्रेरणा का परिणाम है यह ग्रंथ।

मैंने इस ग्रंथ में कथावाचक जी पर केन्द्रित रामायण, नाटकों, कृष्णायन तथा अन्य विषय के अपने आलेखों को समाहित किया गया है, जो समय-समय पर विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। मेरा पूरा प्रयास रहा है, कि उनके शताब्दी के सफ़र को मूर्त रूप दिया जाए।

पं. राधेश्याम कथावाचक पर मुझे आज तक सम्पूर्ण ग्रंथ नहीं मिला। उनकी रचनाएँ तथा उन पर लिखे लेख विविध पत्र-पत्रिकाओं में बिखरे हुए हैं। उन्हे लिपिबद्ध करने की आवश्यकता है। डॉ. रामस्वरूप आर्य, मधुरेश, धर्मपाल गुप्त शलभ, डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी एवं डॉ. अशोक उपाध्याय ने कथावाचक पर कार्य किया हैं।

डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी के निर्देशन में डॉ. रेखा रानी वर्मा ने (वर्ष 2000 में) 'पं. राधेश्याम कथावाचक का काव्य एवं शिल्प' तथा डॉ. नूतन कुमारी 'झा' ने (सन् 2009 में) 'तुलसी' एवं 'पं. राधेश्याम कथावान्चक का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर शोध कार्य हो चुका है। पं. राधेश्याम जी के नाटकों पर पहला शोध काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से 1950 में होने की सूचना है। बुलन्द शहर के सुरेश सेठ का शोध कार्य अधूरा ही रह गया। शोध ग्रंथों के प्रकाशन के अभाव में उनका मूल्यांकन होना शेष है। मधुरेश ने 'पंडित राधेश्याम कथावाचक' शीर्षक से ग्रंथ वर्ष 2010 में लिखा जो किताबघर से प्रकाशित है। यह नाटकों पर केन्द्रित समीक्षात्मक रचना है। इधर सुधीर विद्यार्थी के मार्गदर्शन में कविता भारत द्वारा सम्पादित 'संदर्श' का अंक 'पं. राधेश्याम कथावाचक कुछ जीवन कुछ रंग' मेरे सामने है जिसमें राधेश्याम के नाट्य व्यक्तित्व और उनसे जुड़े लोगों की उत्तम जुगलबंदी है। यह अंक गागर में सागर है। भाई सुधीर विद्यार्थी ने इस अंक के कुछ अंश यथारुप में उपयोग की सहमति प्रदान करके मेरे कार्य को

सुगम कर दिया है। यह ग्रंथ राधेश्याम कथावाचक पर शोधार्थियों, पाठकों तथा लेखकों को कुछ नया करने की प्रेरणा देगा।

ग्रंथ का उद्देश्य है – दिवंगत पं. राधेश्याम कथावाचक को नई पीढ़ी जाने, उनके साहित्य से प्रेरणा ले। आज भी उनका महत्त्व कम नहीं हुआ है। उनकी रचनाएँ राष्ट्र की अमूल्य धरोहर हैं। उन्हे मेरा शत्-शत् नमन!

पाठकों को अमूल्य विचारों की प्रतीक्षा रहेगी।

पूर्णिमा : रक्षाबंधन
सन् 2013
जयपुर।

हरिशंकर शर्मा
213, 10-बी स्कीम,
गोपालपुरा बाईपास, जयपुर-302018
मो.-09461046594
ई-मेल-harishankersharma53@rediffmail.com

सूचीक्रम

—



सफ़र एक सदी का

'साहित्य एवं संस्कृति' शीर्षक से दैनिक अमर उजाला ने 02 जनवरी 2000 ई. विशेष पृष्ठ का प्रकाशन किया था– सफ़र एक सदी का। इस पृष्ठ में महानगर की अनेक विभूतियों का प्रकाशित किया गया था - पं. राधेश्याम कथावाचक; निरंकारदेव सेवक; पं. नाथूलाल अग्निहोत्री नम्र; पं. रामनारायण पाठक; वसीम बरेलवी; वीरेन डंगवाल; सुकेश साहनी; किशन सरोज; खालिद जावेद; इंदिरा आचार्य एवं डॉ. इत्तिखार हुसैन रिज़वी इत्यादि। वस्तुतः सौ साल कम नहीं होते। इस लम्बी अवधि में किसी भी समाज सभ्यता और संस्कृति तमाम कुछ बदल जाता है और अतीत के प्रति मोह नहीं छूटता क्योंकि उसी में हमारे आज की बुनियाद है। अमर उजाला के इस कार्यक्रम में हरिशंकर शर्मा; प्रभात; पवन सक्सेना; दिनेश श्री नेत्र; सुनील सिंह, जितेन्द्र चौहान तथा दिलीप मिश्र का विशेष सहयोग था। इस सफ़र एक सदी में मेरे पाँच परिचय प्रकाशित हुए थे- पं. राधेश्याम कथावाचक (1890-1963 ई.); निरंकार देव सेवक (1918-1994 ई); पं. नाथूलाल अग्निहोत्री नम्र (1909-1970 ई); पं. रामनारायण पाठक (1994-1976 ई.) तथा सुकेश साहनी।

यहाँ प्रस्तुत है पं. राधेश्याम कथावाचक एवं रामनारायण पाठक पर विशेष टिप्पणी जिसे अमर उजाला ने प्रकाशित किया था–

पं. राधे श्याम कथावाचक (1890 - 1963 ई.)

पंडित राधे श्याम कथवाचक का महत्त्व उनकी रामायण के कारण है। उन्होंने रामायण को लोक प्रचलित शैली में लिखकर जन-जन तक पहुँचाया। उनके प्रशंसक उन्हें युग तुलसी भी कहते हैं– 'वाल्मीकि तुलसी भयो, तुलसी राधेश्याम।' ध्यान रहे पं. राधेश्याम कथावाचक कथा अवश्य बांचते थे। अंतिम दिनों में उन्होंने पीत वस्त्र पहनना प्रारम्भ कर दिया था। लेकिन वे संन्यासी नहीं थे। उन्होंने सम्पन्नता-वैभव का जीवन जिया।

रुहेलखण्ड की मूलभाषा उर्दू थी। हिन्दी साहित्य में कुल ग्यारह कृष्णायन ग्रंथ है। विषयवस्तु, भाषा तथा विस्तार की दृष्टि से उनका कृष्णायन उत्तम है। पं. राधेश्याम कथावाचक ने आत्मग्रंथ 'मेरा नाटक काल' लिखकर अपनी यात्रा को विस्तार दिया। उनका साहित्यिक महत्व उनके नाटकों से है। उन्होंने परिवर्तन, रुकमणि-मंगल, ऊषा अनिरुद्ध, छत्रपति शिवाजी, माशूकीहूर आदि नाटक लिखे। वीर अभिमन्यु उनका सर्वश्रेष्ठ नाटक हैं। ध्यान रहे कि वीर अभिमन्यु केवल अर्जुन पुत्र नहीं भारतीय युवा शक्ति का प्रतीक भी है। उनका नाटककाल प्रसाद से पूर्व का है। वस्तुत: पारसी थियेटर की वे अंतिम कड़ी हैं- मोहम्मद आगा हश्र कशमीरी, पं. राम नारायण बेताब एवं पं. राधेश्याम कथावाचक। सन् 1920 में पंडित राधेश्याम प्रेस की स्थापना से कथावाचक साहित्य का स्वर्ण युग शुरू हुआ। इस प्रेस से कथावाचक शैली के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ-साहित्कार जुड़े। इस प्रकार कथावाचक स्कूल में चार चाँद लगे। इस प्रेस में भ्रमर साहित्यिक मासिक का प्रारंभ 1920 ई. में हुआ पत्रिका से भी महत्त्वपूर्ण रचनाकार जुड़े। पं. राधेश्याम अपने जीवन काल में ही एक संस्था बन गए थे।

निरंकार देव सेवक (1918 - 1994 ई.)

हिन्दी साहित्य में मानवतावाद का प्रभाव लेकर चलने वाले तीन साहित्यकार हैं- प्रभाकर माचवे, अज्ञेय और निरंकार देव सेवक। यह सेवक का दुर्भाग्य कहा जाए या सौभाग्य कि उनकी छवि बाल साहित्यकार और कवि के रूप में बनी। वे अकेले ऐसे बाल कवि हैं, जिन्होंने रचनाओं पर प्रकाशकों से रॉयल्टी ली। बाल समीक्षाओं को उन्होंने साहित्यिक मान्यता दिलाई तथा बाल लेखन में वैज्ञानिक दृष्टि का श्रीगणेश। समालोचकों ने उनके प्रौढ़ साहित्य को नोटिस में नहीं लिया। कलरव, स्वास्तिका, चिंगारी, वीरों की गीत तथा बाल साहित्य समीक्षा सहित उन्होंने चालीस ग्रंथ लिखे हैं। अमर उजाला में समय की धारा की शुरूआत उन्होंने ही की। इमरजेंसी के दौरान उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण सम्पादकीय भी लिखे। उनकी रचनाओं का अध्ययन करते समय यह अहसास होता है कि लम्बे समय तक वे बच्चन

की विचारधारा आत्मसात करके चले हैं लेकिन स्वस्तिका के सेवक और चिंगारी के सेवक में जमीन आसमान का अन्तर हैं। चिंगारी उन्होंने हिन्दी के पढ़े लिखे जाहिलों को समर्पित किया है। इलाहाबाद से प्रकाशित यह रचना पर समकालीनों ने कोई नोटिस नहीं लिया। जबकि यह निराला से पूर्व की प्रगतिशील रचना है। वस्तुतः वे किसी वाद के कवि नहीं, समाज में सम्पूर्ण क्रांति के पक्षधर साहित्यकार थे।

पं. नाथू लाल अग्निहोत्री नम्र (1909 - 1970 ई.)

अपने काव्य गुरु नम्र के विषय में सेवक ने लिखा- 'बात सन् 1933 के आसपास की है मेरी इस पंक्ति में नम्रजी ने कदली के पात, पात में पात लिखकर पंक्ति पूरी करने का कहा, मैंने यह पंक्ति इस प्रकार पूरी की - 'बामन की बात, बात में बात।' वे मुझसे बहुत प्रभावित हुए। वस्तुतः नम्रजी मैथिलीशरण गुप्त की परम्परा के कवि थे। वनस्थली महाकाव्य इसका उदाहरण है। इसके जरिए उन्होंने खड़ी बोली की महान सेवा की है।

नम्रलता (1968 ई.) का यह पद ऑल इंडिया रेडियो से प्रातः स्मरण में गाया जाता था। – 'क्षण भंगुर जीवन कतिका।' ये पंक्तियाँ सिटी श्मशान भूमि में एक शिलापट में अंकित हैं। पं. राधेश्याम प्रेस से प्रकाशित महाभारत के कथाखण्ड वकसंहार, द्रोपदी विवाह, सुभद्रा-हरण, राजसूर्य यज्ञ, द्रोपदी चीरहरण, किरात अर्जुन वध आदि उनकी महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं। इस लेखन में उन्होंने कथावाचक शैली का निर्वाह किया है। बहुत कम लोगों को मालूम होता है कि उन्होंने वृंदावन की पत्रिका प्रेम संदेश का एक दशक तक सम्पादन किया। वे सिद्धहस्त कवि व साहित्य ज्ञाता थे। स्व. रामजी शरण सक्सेना के काव्य-संग्रह निर्झरिणी में छंद संशोधन का कार्य उन्होंने किया। नम्र जी का सर्वादिक महत्त्व आँचलिक कवि के रूप में है।

पं. रामनारायण पाठक (1894 - 1976 ई.)

महानगर कथावाचक स्कूल के अंतिम स्तम्भ पं. रामनारायण पाठक को साहित्यिक उपलब्धियों को भूल गया है। उनकी जन्मशती पर

कोई कार्यक्रम नहीं हुआ। नया टोला आलमगिरीगंज निवासी पं. रामनारायण पाठक ने श्रीमद्भागवत (1928), अहिरावण वध, प्रेतलोक, सत्यनारायण की कथा, प्रहलाद चरित (1927), आत्मा की अमरत, कर्मयोग, विराट रूपदर्शन, जीवब्रह्म, अर्जुन का समाधान, दृष्टान्त महासागर आदि ग्रंथ लिखे हैं। अजायबघर एवं भारतीय एकता मासिक का प्रकाशन सन् 1962 में किया। वे भ्रमर मासिक पत्रिका के अंतिम संपादक थे। उन्होंने सन् 1925 से 30 तक भ्रमर का सम्पादन किया है।

~वसीम बरेलवी

किसी कलाकार के सृजन का उसकी संवेदनशीलता से सीधा रिश्ता है। अंतराष्ट्रीय स्तर पर अपनी खास पहचान बनाने वाले शायर वसीम बरेलवी ने भी इंसान रिश्तों के तमाम पहलुओं को छुआ। उनको ग़ज़लों और शेरों की शक्ल में ढाला और अपने संजोये हुए शब्दों में जिंदगी की हकीकत को चित्रित किया। वालिद शाहिद हसन नसीम मुरादाबादी, उनके साथी ज़िगर मुरादाबादी और रईस अमरोहवी से मिली प्रेरणा ने कम उम्र के जाहिद हसन को कुछ लिखने पर मजबूर कर दिया। उम्र काफी कम थी और पढ़ने-लिखने का दायरा भी कक्षा छः का तभी ग़ज़लें कहना शुरू कर दीं।

बड़े बुजुर्गों ने प्रतिभा को भांपा लेकिन उस समय उनकी शायरी को हवा नहीं दी। पढ़ाई-लिखाई के साथ-साथ यह दौर चलता रहा। आगरा विश्वविद्यालय से उर्दू में एम.ए करने के बाद संभल के हिंदू इंटर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदू कॉलेज में शिक्षण से जुड़े रहे। सन् 1962 में बरेली कॉलेज में उर्दू विभाग में पढ़ाना शुरू किया। अपनी शेरो-शायरी की बदौलत हिन्दुस्तान के अलावा न्यूयार्क, वाशिंगटन, शिकागो, बॉस्टन, सेन फ्रांसिस्को और कतर में मुशायरों में शिरकत कर आए वसीम बरेलवी की ग़ज़लों का संकलन 'तब्स्सुम-ए-गम' और 'आँसू मेरे दामन तेरा' काफी धूम मचा चुका है। 90 में छपे 'मिज़ाज' में उनके प्रशंसको को और छूने वाली ग़ज़ले मिलीं। दुनिया भर की तमाम साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में उन्हें जगह मिली है।

अमेरिका में नसीम-ए-अदब उर्दू एवार्ड से नवाजे गए वसीम बरेलवी को लखनऊ के इम्त्याज-ए-मीर, हिन्दी संगम ग़ज़ल एवार्ड और हिंदी-उर्दू साहित्य एवार्ड से भी नवाजा जा चुका है। अगली सदी के लिए उनके पास कई योजनाएँ हैं, साथ ही एक संदेश भी है। 'नई सदी में सूरज की पहली किरण के साथ जब हम कदम रखें तो मन में ईमानदारी का ज़ज्बा हो, जो पुरानी सदी में दूर सा हो गया है। यही तमन्ना है।' उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा आपको सम्मानित किया जा चुका है।

वीरेन डंगवाल

समकालीन हिंदी कविता में डॉ. वीरेन डंगवाल ने अपने कई काव्य-संकलन से महत्त्वपूर्ण उपस्थिति जताई है। हालांकि वह लंबे समय से लिखते रहे हैं। अपनी कविताओं के प्रति लापरवाही भरे रवैये के लिए चर्चित डॉ. डंगवाल की कविताओं को हिन्दी साहित्य की दुनिया में लापरवाही से नहीं लिया गया। उनके संग्रहों को श्रीकांत वर्मा तथा रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार जैसा सम्मान मिला, जो समकालीन हिन्दी-कविता के काफी प्रतिष्ठित माने जाते हैं।

कविताओं के अलावा डॉ. डंगवाल का अनुवाद तथा पत्रकारिता में खास योगदान रहा है। नाजिम हिकमत तथा ब्रेख्त की क़विताओं का अनुवाद विशेष तौर पर चर्चित रहा है। इसक अलावा वीरेन डंगवाल काफी समय तक इलाहाबाद से निकलने वाले हिन्दी दैनिक अमृत प्रभात तथा बरेली के अमर उजाला से भी जुड़े रहे। शुरुआती दौर में अमृत प्रभात में उनका स्तम्भ 'घूमता आइना' बेहद लोकप्रिय हुआ। अमर उजाला के साहित्यिक परिशिष्ट का उन्होंने लंबे समय तक संपादन किया।

अस्सी तथा नब्बे के दशक में जब हिंदी कविता कुछ इने-गिने बिंबो के इर्द-गिर्द ही घूम रही थी, डॉ. वीरेन डंगवाल की कविताओं ने इस जड़ता को तोड़ा। 'इसी दुनिया में' संग्रह की संकलित अपनी कविताओं में उन्होंने अपने आसपास की दुनिया की साधारण सी चीजों को एक खास तरह की गहरी संवेदना के साथ देखने की कोशिश की, जिसे आलोचकों

ने बहुत सराहा। सन् 1991 में आए उनके पहले कविता संग्रह के बाद फिलहाल उनके दो लंबे आलोचनात्मक लेखों का संकलन पुस्तक रूप में संग्रह आ रहा है। दुश्चक्र के सृष्टा कृति पर आपको सन् 2004 में साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है। अगले कविता संग्रह की भी तैयारी है।

सुकेश साहनी

लखनऊ में जन्मे और आईआईटी मुंबई से एप्लाइड हाइड्रोलाजी में स्नातकोत्तर डिग्री हासिल करने वाले सुकेश साहनी की किस्सागोई में बचपन से ही रुचि थी। इसी रुचि के चलते उन्होंने किशोर वय में ही कई उपन्यास लिख डाले। हालांकि वह अब उसे गंभीर लेखन की श्रेणी में नहीं गिनते। भू-जल विद के तौर पर सरकारी नौकरी में आने के बाद भी लिखने-लिखाने का दौर जारी रहा। सन् 1986 में बरेली आने के बाद उनके रचनात्मक लेखन ने एक नया मोड़ लिया। सारिका के एक लघु कथा विशेषांक को देख कर उन्हें लगा कि इस क्षेत्र में रचनात्मकता की काफी संभावनाएँ हैं। हालांकि उनकी पहली लघुकथा सन् 1975 में ही छप चुकी थी। मगर अब उन्होंने इसे एक चुनौती के रूप में लिया।

फरवरी सन् 1995 के 'हंस' के संपादकीय में राजेन्द्र यादव ने संस्कृत और पाली का जिक्र करते हुए हिंदी में लघुकथा की खराब स्थिति पर चिंता जताई। मगर इसी संदर्भ देश भर के उन लोगों को जब वह याद करते हैं जिन्होंने अद्भुत लघु कथाएँ लिखी है तो उसमें सुकेश साहनी का भी नाम आता है। सन् 1991 में उनकी लघु कहानियों का पहला संग्रह 'डरे हुए लोग' आया। यह इतना लोकप्रिय हुआ कि इसका अंग्रेजी,गुजराती, मराठी, पंजाबी तथा कुछ कहानियों का जर्मन में भी अनुवाद हुआ। इसके सात साल बाद उनका दूसरा संग्रह 'ठंडी रजाई' आया। दो साल के भीतर इसके भी पंजाबी तथा अंग्रेजी अनुवाद हो गए। फिलहाल श्री साहनी ने बरेली को ही अपना रचना स्थल बना रखा है। इस समय वह समकालीन भारतीय लघु कथाएँ तथा विश्व की लघु कथाएँ

शीर्षक से दो पुस्तकों के संपादन में जुटे है। वर्तमान में लघुकथा की साइड महत्त्वपूर्ण साहित्यिक सेवा है।

किशन सरोज

कॉलेज के आवारगी भरे दिनों में भटकते हुए गुलाब राय इंटर कॉलेज में कवि सम्मेलन में चले गए, सुना और इस कदर प्रभावित हुए कि लिखना शुरू कर दिया। किशन सरोज का नाम आज हिन्दी के गीतकारों मे काफी ऊँचाई पर है। विद्रोही धारा के कवि नागार्जुन उन्हें मधुर गीतों का रचनाकार कहते हैं। उनके शब्दों में, 'युगधर्मिता ने उनके शब्द-शिल्प को एक नया आयाम दिया है।'

सन् 1960 से श्री सरोज ने विधिवत लिखना शुरू किया। हालांकि बीए प्रथम वर्ष में पढ़ने के दौरान बीमारी के समय जब वह अपने गाँव बल्लिया चले गए थे तो उन्होंने पहली बार कविता लिखी थी। आने वाले दिनों में उनकी लोकप्रियता गीतों में संगीत और ध्वनि के रागात्मक इस्तेमाल के चलते काफी रही। उस दौर की पत्रिकाओं में किशन सरोज की अगल पहचान थी। धर्मयुग, कादंबिनी, नवनीत, साप्ताहिक हिंदुस्तान तथा गगनांचल आदि पत्रिकाओं में किशन सरोज की कविताएँ देखने को मिलती हैं। सन् 1986 में उनका संग्रह आया, 'चंदन वन डूब गया' जिसने उनकी लोकप्रियता को नए आयाम दिए। इसके लगभग सात वर्षो बाद जब मैनचेस्टर में पहला अन्तराष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन हुआ तो उन्होंने भी भारत का प्रतिनिधित्व किया। साहित्यिक संस्था निर्झरिणी ने उन पर विशेषांक प्रकाशित कर अच्छी पहल की है।

खालिद जावेद

शोर-शराबे से दूर रह कर अपने लेखन में जुटे रहने वाले खालिद जावेद कई मामलों में दूसरे लेखकों से अलग हैं। उनकी न सिर्फ बरेली में बल्कि समूचे उर्दू साहित्य में एक अलग पहचान है। उर्दू के प्रख्यात आलोचक शमशुर्रहमान फारुकी ने अपने साक्षात्कार में उन्हें उर्दू का

जबरदस्त कहानीकार कहा था। दूसरी तरफ हिंदी के रचनाकार उदय प्रकाश, सारा राय और ममता कालिया उनकी कहानियों के प्रशंसक है। अंग्रेजी में तारा लेन नाम का उपन्यास लिखने वाली शमा फतेहअली ने कथा पुरस्कार से सम्मानित उनकी कहानी 'बुरे मौसम मे' का 'इन ए फीवरिश सीजन' के नाम से अनुवाद किया था।

दर्शनशास्त्र और उर्दू साहित्य से स्नातकोत्तर खालिद की कहानियों में दार्शनिकता तथा निम्न मध्यवर्गीय मुस्लिम समाज के अंधविश्वास तथा मिथक और उनकी सामाजिक चेतना का अद्भुत संगम देखने को मिलता है। अपनी कहानियों में वह व्यक्ति के भीतर के संसार से बाहरी दुनिया तक का सफ़र बड़े कौशल से रचते है। चरित्र, वातावरण और भाषा के मामले में भी उनकी कहानियाँ अनूठी नज़र आती है। शुरूआती दौर में उर्दू में कविताएँ लिखने वाले खालिद ने बाद में खुद को कहानियों पर केन्द्रित करे दिया। बेहद कम लेकिन काफी सावधानी से लिखने वाले खालिद की लगभग हर कहानी उर्दू में चर्चा का विषय बनती है। साल में लगभग एक कहानी का औसत बनाने वाले खालिद की इस वर्ष आने वाली दो कहानियाँ 'पेट की तरफ मुडे हुए घुटने' और 'कूबड़' उनके रचनात्मक सफर में नए मोड़ का संकेत देती है।

डॉ. इफ्तिखार हुसैन रिजवी

हिन्दी-उर्दू और अंग्रेजी पर एकाधिकार रखने वाले डॉ. इफ्तिखार हुसैन रिजवी को बरेली के साहित्यिक क्षेत्र में भले ही ज्यादा शोहरत नहीं मिली, बाहर के लोगों ने उनके सृजन को खूब मान्यता दी। डॉ. रिजवी अब तक करीब साढ़े पांच सौ अंग्रेजी कविताएँ लिख चुके हैं। डॉ. कृष्णा श्रीनिवास के महाकाव्यों पर पाँच शोध पत्र लिखकर डी. लिट लेने वाले डॉ. रिज़वी कुछ साल पहले तिलक इंटर कॉलेज में प्रधानाचार्य के पद से सेवानिवृत्त हुए। अंग्रेजी के साथ-साथ विश्व प्रसिद्ध उर्दू गज़लों के पाकिस्तानी संकलन ऐवान में उनकी ग़ज़लों की मौजूदगी यह भी साबित करती है कि डॉ. रिजवी ने अंग्रेजी के साथ-साथ उर्दू में भी अपना खास

मकाम बनाया है। 'ट्रेजडी ऑफ कर्बला पर अंग्रेजी में एपिक लिखने की योजना है। गत दिनों बीमारी के कारण वे इस संसार से विदा ले चुके हैं। उन्हें मेरा नमन्।

डॉ. इंदिरा आचार्या

नारी मन की व्यथा-कथा और उसके अंतर्द्वंद्वों को उकेरने में सिद्धस्त डॉ. इंदिरा आचार्या ने बचपन से ही लिखना आरंभ कर दिया था लेकिन 1975 से व्यवस्थित और अर्थपूर्ण लेखन प्रारंभ हुआ। उनकी पहली रचना 'यात्रा: चेतना के अवरोहों पर' गद्य-काव्य प्रकृति की है। जो वर्ष 1988 में प्रकाशित हुई। इसके अलावा अभी तक दो कहानी-संग्रह 'ताकि सनद रहे' (1992) तथा 'मुक्तिदंश' (1999) प्रकाशित हो चुके हैं।

लेखन को अपना व्यक्तिगत अनुभव मानने वाली डॉ. इंदिरा आचार्या की कहानियों में 'अपनी अस्मिता बचाए रखने को समर में जूझती, कभी जीतती और कभी हारती नारी आख्यान ही मुख्य विषय वस्तु है।' वर्तमान में साहू रामस्वरूप स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय में हिन्दी विभाग में अध्ययन कार्य में रत डॉ. आचार्या इधर अपने वर्ण्य-विषय में आए बदलाव को स्वीकार करती है और कहती है कि यह बदलाव उनके व्यापक होते हुए जीवन के अनुभवों के कारण आया है। डॉ. आचार्या की कहानियाँ संग्रह के रूप में प्रकाशित होने से पूर्व सारिका, धर्मयुग, कादम्बिनी आदि अपने समय की प्रमुख साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी है। उन्होंने कुछ कविताएँ भी लिखी है जो पुस्तक रूप में तो नहीं छपी है लेकिन साहित्यक पत्रिकाओं में प्रकाशित अवश्य हुई है इनमें प्रमुख रूप से रेत में रोशनी, दरख्त, अनुबंध, इतिहास और कविता तथा रक्त की सतह पर प्रमुख है।

बरेली जनपद में काशीनाथ शर्मा (प्रपौत्र राधेश्याम) पौत्री शारदा भार्गव, पं. देवेन्द्रनाथ शर्मा, मोतीलाल बोहरा अनेक नाम हैं जिनकी मधुर स्मृतियाँ कथावाचक से जुड़ी है।

भ्रमर की राष्ट्रीय आन्दोलन में भूमिका



सन् 1923-24 में गाँधी आंदोलन समाप्त हो गया था। यह युग आन्दोलन का कम विचारों के प्रचार का अधिक था। अतः दैनिक पत्रों की प्रगति के प्रभाव पर मासिक पत्रों की अधिक प्रगति हुई। 1923 में बरेली से प्रकाशित 'भ्रमर' हिन्दी-मासिक इसी प्रगति का परिणाम था। यह विशुद्ध हिन्दी-पत्रिका थी।

बरेली के पं. राधेश्याम कथावाचक प्रेस से 'भ्रमर' मासिक पत्र का सम्पादन 1923 में प्रारम्भ हुआ। अपने समय की इस महत्त्वपूर्ण पत्रिका का प्रकाशन प्रत्येक मास की पूर्णिमा को होता था। वार्षिक मूल्य था तीन रूपया तथा सम्पादक थे, पं. रामनारायण पाण्डेय।

बरेली में पत्रकारिता लेख में निरंकार देव लेखक ने 'भ्रमर' का सम्पादक पं. गंगा सहाय पाराशरी तथा प्रकाशन वर्ष 1929 माना है। पत्रिका के सन्दर्भ में अन्य जानकारियाँ भी भ्रामक हैं।

उक्त सन्दर्भ में श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र ने लिखा- 'भ्रमर' पत्रिका का प्रकाशन अक्टूबर 1922 में आरम्भ हुआ। इसके प्रथम सम्पादक थे पं.

गोपी वल्लभ उपाध्याय। सितम्बर 1923 से इसके सम्पणदक राम नारायण पाठक हो गये जिन्होंने 1928 ई. तक इसका सम्पादन किया। पं. गंगासहाय पाराशरी 'कमल' का 'भ्रमर' से कोई सम्बन्ध नहीं था।' (निर्झरिणी 1988)।

मेरे पास 'भ्रमर' के फरवरी-मार्च 1929 का अंक सुरक्षित हैं। इसमें 'भ्रमर' के संस्थापक पं. राधेश्याम कथावाचक, सम्पादक पं. रामनारायण पाठक तथा मुद्रक पं. राधेश्याम पुस्तकालय बरेली मुद्रित है। 'हिन्दी-पत्रकारिता का इतिहास' में 'भ्रमर' का प्रकाशन वर्ष 1923 ई. अंकित है।

पं. राधेश्याम प्रेस बरेली से रामनारायण पाठक के सम्पादकत्व में प्रकाशित 'भ्रमर' मासिक पत्र जनवरी, अक्तूबर, दिसम्बर तथा सितम्बर 1928 के चार अंक मेरे पास सुरक्षित हैं। पत्रिका के इन पृष्ठों में पत्रकारिता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर सुरक्षित हैं। पत्रिका के मुख्य पृष्ठ पर निम्न पंक्तियाँ अंकित की जाती थीं-

'विश्ववाटिका में विचरण कर पसीना पुष्पों का मकरंद, लेकिन भ्रमर भूल मत जाना प्रभु पर पंकज का आनंद, सच्चे सुख का धाम वही है, वहीं ठहरना जो निस्पन्द' राधामाधव की गुण गाथा गुन-गुन गाना स्वच्छन्द।'

जनवरी 1928 के अंक तीन के प्रकाशन के साथ ही 'भ्रमर' सातवें वर्ष में प्रवेश करता है। इस अंक में प्रकाशित कविता 'कृपा-पात्र में पं. छैल बिहारी दीक्षित 'कंटक' की भावनाएँ 'मूकवेदना' की ज्वाला में फूटने वाली चिंगारी है। सर्वनाश की इस बेला में शान्ति कहाँ? पत्रिका की स्तरीय सामग्री उपयोगी बन पड़ी हैं। 'प्रताप' में रामतेज शस्त्री के असौन्दर्य बोध को प्रतीक विषय लोलुप क्रीडा, शमशान का वैताल तथा हविस का कुत्ता है। जो हरियाली तो दिखाता है लेकिन घसीटता है करील के कर्कश कांटों में।

'रामधारीसिंह दिनकर' की कविता 'पुष्प विलास'– खिला विहस

कर उपवन में था लेकिन आज फिर रोकर मुरझाया है। लैला कौन थी प्रहसन ही नहीं सामयिक सत्य है।लैला की आवाज समय की बदली हुई हवा में मिलकर शान्त हो गयी है।

'भ्रमर' ने अपने सम्पादकीय में लिखा था- 'भारतीय प्रजा का रूस की सरकार की नीति और सिद्धांत में रत्ती भर सहानुभूति नहीं है। रत्न गर्भा वसुन्धरा वाले इस भारत में करोड़ों प्रजा भूखी-नंगी रहती है। उचित हो देश में खुशहाली बढ़ाने के उपाय किये जायें।

इसी प्रकार 17 नवम्बर 1928 में लाला लाजपत राय की मृत्यु पर 'भ्रमर' ने आगे लिखा-'लाला जी के जिस कार्य से सरकार विफल हो उठी थी। अब दूने जोर शोर से किया जाय। प्राण के बदले प्राण लेना तुच्छ कार्य है।' 'भ्रमर' क्रान्ति के साथ शान्ति का समर्थक था।

सितम्बर 1928 के अंक में हरीशचन्द्र की अग्नि परीक्षा का रंगीन चित्रण 'भ्रमर' के मुख्य पृष्ठ पर प्रकाशित हुआ है। अंक की अधिकांश सामग्री कृष्ण पर आधारित है। 'जन्माष्टमी' और श्रीकृष्ण (लेख) में हरिशरण श्रीवास्तव ने अंग्रेजों के कारनामों की व्याख्या की है।

वर्तमान काल में भारत की जो दुर्गति हो गयी है उसका मात्र कारण हमारी अकर्मण्यता ही है। निज कार्यकलाप से दिखाया कि हममें से प्रत्येक कर्मयोगी बनकर कर्तव्यपालन में अपने प्राणों तक को उद्यत है।'

'तरानये आजाद' में कवि सौ बार मरने तथा सौ बार जीने की बात मात्र याद करने के लिए कहता है। 'अनंग की तरंग' में माधुर्य का अच्छा समावेश है।

'भ्रमर' ने अपने सम्पादकीय में लिखा-'इण्डियन प्रेस प्रयाग के बाबू चिन्तामणि घोष तथा हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति श्रीधर पाठक की मृत्यु। संस्कृत की अटूट सेवा के लिए खुर्जा के सेठ गौरीशंकर गोयनका द्वारा डेढ़ लाख रूपये का 'पुरस्कार' (दान) कालीदास, वररुचि, वराहमितिर आदि पण्डित रत्न उसी समय में चमके थे जबसे संस्कृत के

समादार को समर्पित लोगों की देश में कमी हुई तब से संस्कृत शास्त्री के अभ्युदय का सूर्यास्त हो गया।'

इस अंक में लगभग 25 पत्र-पत्रिकाओं की अच्छी जानकारी है जो पत्रिका के साहित्यिक रूप की पहचान देने में समर्थ है।

'भ्रमर' मासिक पत्र का अक्टूबर 1928 का अंक मेरे सामने है। श्याम नारायण सेठ के लेख 'मस्तिष्क की शक्तियाँ'- आधुनिक शिक्षा ने हमें ऐसा मूर्ख बना डाला है कि हम किसी बात को उस समय तक ठीक नहीं मानने को उद्यत दिखायी नहीं देते जब तक पंछाही विज्ञान और कलाकोविद् उसका समर्थन न कर दें। अपने पूर्वजों की बातों पर चाहे वह कितनी ही स्थूल अथवा मार्मिक क्यों न हो कान देना तो मानो सभ्यता का गला घोटना है।'

कुछ इसी प्रकार का समर्थन पं. रामनारायण चतुर्वेदी ने 'आर्तपुकार' में किया है-

'बहु भाँति सताये गये यहाँ के वासी।
इनकी विद्या, बुद्धि, कला सर्वथानासी।।
हम हैं अवलम्ब विहीन विलम्ब न कीजै।।
दुख आरत भारत की अब तो सुधिलीजै।।'

बाबू गुप्तेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव की 'विनय मैं-'यह दृश्य राज तुमारे नाम पर न्योछावर की हुई हरिश्चन्द्र की नगरी है। मैं दिन रात तुम्हारे सामने सतृष्णा झोली फैलाये बैठा रहता हूँ।' सम्पूर्ण में ब्रिटिश साम्राज्य के कुपरिणामों की झाँकी है। 'दिन के फरे में' अंग्रेजी दास्ता का संकेत है। कविता-अनांग आनंद में मुरलीधर का नाद है।'

पत्रिका के उक्त अंक में-'वासना वैभव, आत्मसंकल्प, श्रृंगार शतक तथा वैराग्य शतक एवं बलदेव प्रसाद मिश्र (रायगढ़); वर्तमान (कानपुर के दैनिक का विजयांक); किसान (इन्दौर); भारतेंदु (ज्योतिप्रसाद मिश्र प्रयाग से प्रकाशित मासिक) तथा त्याग भूमि (पं. हरि भाऊउपाध्याय- अजमेर सहित अनेक पत्रिकाओं का उल्लेख है।

'भ्रमर' के दिसम्बर 1928 ई. अंक में अफगान नरेश अमीर अमान उल्ला खाँ का चित्र प्रकाशित है। प्रेम का पथ तथा प्रतीक्षा (कविता) के जीवन का यथार्थ–

'कब से बैठा हुआ लकीरें खींच रहा हूँ मैं गिन-गिन।
बोलो अवधि पूर्ण कब होगी, कब देखूंगा वे शुभ दिन॥''

पं. नरेन्द्र देवशास्त्री ने 'अधिकार' में चर्चा की है-

'अधिकारयुक्तं बोलने का संग्रह करो..प्रजा का युगवत पालन करना राजा का अधिकार है। जो कर्तव्य के मार्ग पर अकर्तव्यं, धर्म के नाम पर अधर्म, राज्य के नाम पर अत्याचार-अनाचार करते रहते हैं। उनके अधिकार सुरक्षित नहीं रह सकते।'

श्याम नारायण पाण्डेय की कविता 'भ्रमर' में भारतीय उपवन के फूलने-फलने की समझ है।

दिसम्बर 1928 के सम्पर्णदकीय में पं. रामनारायण पाठक ने लिखा था-

'भारतीय खण्ड व्यापार पर लगे ग्रहण के सन्दर्भ में सरकार विलायत के व्यापार की तरक्की चाहती है भारत की नहीं।' हम विदेशी शक्कर खायें और विदेशी दूध पियें और विदेशी सरकार की जय मनावें।'

गाँधी जी का स्वदेशी आन्दोलन की सम्पादकीय में काम कर रहा है।

फरवरी-मार्च 1929 में प्रकाशित 'भ्रमर' मासिक के अंक वैचारिक आन्दोलन हैं। पत्रिका के तेवर-कलेवर में बाँकापन है।

फरवरी 1929 के भ्रमर के अंक में प्रकाशित यह सम्पादकीय पत्रकारिता शैली का अनूठा उदाहरण–

अलीगढ़ में निकलने वाले अखबार अलीगढ़ मेल तथा हिन्दी बंगवासी दोनों क्रमशः मुसलमानों-हिन्दुओं के अपरिवर्तनवादी दल के प्रतिनिधि होकर देश और राष्ट्र का अनर्थ कर रहे हैं। इनके इस चंगुल से ईश्वर कब इस दलित देश का उद्दार करता है।''

नशे की झझोंक' में 'मतलावा' (सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला)- महात्मा गाँधी भारत को श्याम भूमि बनाना चाहते हैं। देश का किसान जब त्राहि कर रहा हो तब सनातन धर्म पताका उठाकर कोरा श्रीकृष्ण संदेश सुनाते हुए मातृभूमि में शांति स्थापित कर देना दुराशा मात्र है।'

विलायत में होली दहन (लेख) में निर्गुण जी ने अंग्रेजी हुकूमत की अच्छी ख़बर ली है।

अपने बेबाक सम्पादकीय में एक स्थान पर 'भ्रमर' ने पं. राधेश्याम कथावाचक के नाटकों के प्रति ओछे विचार रखने वालों की भी अच्छी ख़बर ली है।

विविध विषय विभूषित मासिक पत्र 'भ्रमर' के मार्च 1929 अंक में कुछ ही पृष्ठ शेष हैं। जो सामग्री है उसमें-'फाग की राग' (पं. मुरलीधर शर्मा); शैतान (रागेश्वर नाथ वर्मा) दार्शनिक की होली (प्रेमचन्द बी.ए.) सहित कविता लेख कहानी इत्यादि लेख 'दार्शनिक की होली' में प्रेमचन्द ने 'सम्पत्ति पर सभी के समान अधिकार की बात पर जोर दिया है।'

कुल मिलाकर भ्रमर मासिक पत्रिका का यह वैचारिक आन्दोलन- प्रेमचन्द, निराला, रामप्रसाद सिंहा बिस्मिल, रामधारी सिंह दिनकर, श्याम नारायण पाण्डेय तथा परिपूर्णानन्द वर्मा सहित अनेक हस्ताक्षरों का स्पर्श पाकर 1922 ई. से 1929 पर्यन्त जनता के हृदय कमल में 'भ्रमर' के समान बसा रहा। आज इस दुर्लभ पत्रिका के अंक सुरक्षित रखने की आवश्यकता है। संभवतः 'भ्रमर' से ही रंगीन छपाई की शुरूआत रुहेलखण्ड में आरम्भ हुई। पत्रिका में प्रकाशित अनेक दुर्लभ चित्र हैं। अनुसंधानकर्ताओं को 'भ्रमर' में दुर्लभ सामग्री मिलेगी।

(आज : 12 दिसम्बर, 1989)

पं. राधेश्याम कथावाचक के चिंतन की दिशा

पंडित राधेश्याम कथावाचक के जन्म-शताब्दी वर्ष 1990 में विविध आयोजनों के साथ ही उनके संदर्भ में विविध मत विवादों का दौर भी चालू है। ऐसी स्थिति में आज जरूरत इस बात की है कि उन्हे तमाम विवादों से परे रचना की कसौटी पर परखा जाए।

पंडित जी को रचना की कसौटी पर परखा जाना भी आसान नहीं है। इस दिशा में प्रयासों की शून्यता से बचने का उचित माध्यम यही है कि उनकी बिखरी हुई रचनाओं को खोज कर एकत्र किया जाए। इसी दिशा में एक सार्थक प्रयास उनकी लम्बी कविता 'देवकी का स्वप्न' की खोज भी है।

वर्ष 1931 में गोरखपुर स्थित गीताप्रेस ने अपनी पत्रिका कल्याण का 'श्री कृष्ण' अंक प्रकाशित किया था। इस अंक में श्रीमती एनी बेसेंट, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, काका कालेलकर, पं. गोपीनाथ कविराज, राम सेवक त्रिपाठी, भूपेन्द्र सान्याल, प्रेमचन्द, हरिऔध, श्याम नारायण पाण्डेय, पं. बलदेव मिश्र, नरदेव शास्त्री तथा लक्ष्मी नारायण गर्दे जैसे महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षरों सहित पंडित राधेश्याम कथावाचक की कविता 'देवकी का स्वप्न' भी प्रकाशित की गई थी।

कविता की शुरूआत में पं. राधेश्याम ने कृष्ण अवतार की परिस्थितियों व तिथि आदि का उल्लेख किया है:-

"इधर प्रार्थना कर रहे थे नर रत्न अनेक।
उधर देवकी मातु ने स्वप्न निहारा एक।।

पं. राधेश्याम की इस कविता में महज कृष्ण-जन्म की परिस्थितियों का चित्रण नहीं था बल्कि स्वतंत्रता के पूर्व भारत के तत्कालीन स्वरूप व उसकी स्थिति का एक खाका भी था। देवकी को

स्वतंत्र भारत के बिम्ब के रूप में प्रयोग करते हुए कवि ने बहुत कुछ कहने का प्रयास किया:-

"नीचे था लाल रक्त सागर,
जिसमें सब सृष्टि धंस रही थी।
ऊपर प्रकाश के पर्दे में,
छोटी सी मूर्ति हँस रही थी।।
पृथ्वी पर शोर हुआ- मानों,
सब दुनिया टकराती है।
नभ पर यह सुना-मुधर,
मीठी मुरली की तानें आती हैं।।"

भारत-विभाजन की उथल-पुथल के बाद नए दृष्टिकोण भी सामने आ चुके थे। इस नए और खुले वातावरण का बिम्ब प्रस्तुत करते हुए पं. राधेश्याम ने अपनी कविता में कहा है:-

"इस उथल-पुथल में वह देखा,
सब प्रकृति नवीन हो चली है।
जग में यह नई लालिमा है,
कालिमा विलीन हो चली है।"

स्वतंत्रता के बाद पहले दशक में ही विश्व राजनीति में भारत काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका में सामने आया। कृष्ण को भारतीय नेतृत्व का प्रतीक मानते हुए पं. राधेश्याम ने लिखा: -

"इतने में उस मूर्ति ने बढ़ा दिया आकार,
वह बढ़ती थी, हो रहा था छोटा संसार।"

पं. राधेश्याम कथावाचक ने कृष्ण व देवकी जैसे प्रतीकों की सहायता से देश की मौज़ूदा स्थितियों का जो चित्रण किया है, वह उनकी काव्यगत विशेषताओं के अलावा राजनीतिक व सामाजिक स्थितियों पर गहरे चिंतन का भी परिचायक है।

पंडित राधेश्याम ने इस लम्बी कविता में लोकतंत्र के प्रतीक कृष्ण

के अवतार की सार्थकता ही इसी में बताई है कि वह जन-जन का विचार बन सकें। इसी बिम्ब के सहारे उन्होंने यह विचार रखने का प्रयास भी किया है कि लोकतंत्र का अस्तित्व वहीं है जहाँ आपस में भेदभाव नहीं हो:-

''कृष्ण वहीं बसते हैं,
जहाँ मैं-तू का झगड़ा न हो।''

सभी जानते हैं कि भारत की राजनीति जेल की सलाखों के पीछे ही पुष्ट हुई है। इसी व्यथा को पं. राधेश्याम ने इन पंक्तियों में दर्शाया है:-

''जो आँखे बाट जोहती थीं,
उन आँखों का तारा हूँ।
हे ! कारागृह की तपस्विनी,
मैं अष्टम लाल तुम्हारा हूँ।।''

इसमें संदेह नही कि पं. राधेश्याम कथावाचक ने अपनी इस लम्बी कविता का आधार भक्ति रस को ही बनाया लेकिन इसके साथ ही उन्होंने सामयिक परिस्थितियों को भी रेखांकित किया है। पं. राधेश्याम तुलसी-कबीर की मिली जुली परम्परा के कवि हैं। उन्होंने तुलसी के समन राम भक्ति एवं कृष्ण भक्ति पर समान रुप से कलम चलायी है। उन्होंने कविता की भाषा खड़ी बोली को चुना। भाषा मुहावरेदार है। आज उनके काव्य के पुनर्मूल्यांकन की जरूरत है।

समकालीन नज़रिया
25 नवम्बर 1990 ई.

नाटकों को कंपनियों के स्टेज तक पहुँचाया

25 नवम्बर 1890 को पं. राधेश्याम कथावाचक का जन्म आगे चलकर हिन्दी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि बना। प्रतिभा के धनी कथावाचक जी ने जीवन के अन्तिम दिनों तक लेखन जारी रखा। राधेश्याम रामायण, 'उत्तर रामचरित, राधेश्याम विलास', 'राधेश्याम कीर्तन, 'द्रोपदी लीला', 'परम भक्त प्रहलाद', 'वीर अभिमन्यु', 'परिवर्तन', 'रुक्मिणी मंगल', 'उषा-अनिरुद्ध', 'छत्रपति शिवाजी', 'पद्यपुष्पांजलि', 'कृष्ण-सुदामा' 'घन्टापन्थ', 'सेवक के रूप में भगवान श्रीकृष्ण', 'शान्ति दूत श्री कृष्ण', 'मेरा नाटक काल' राधेश्याम गीतावली सहित लगभग पचास ग्रन्थों का सृजन-सम्पादन उन्होंने किया। रामायण की कथावाचक शैली उनकी कृतियों में एक नये रूप में ढली।

हिन्दी नाट्य मंच भी श्री राधेश्याम का ऋणी रहेगा। उन्होंने नाटकों को पेशेवर कम्पनियों के स्टेजो पर पहुँचाने का उद्योग किया। पेशेवर कम्पनियों का पारसी स्टेज ही शनैः शनैः हिन्दी का स्टेज बनता गया। राधेश्याम कथावाचक का सम्बन्ध मूलतः बम्बई की न्यू अल्फ्रेड पारसी थियेटर कम्पनी से था। महात्मा गाँधी ने अपनी आत्म कथा में सत्य 'हरिशचन्द्र' तथा 'श्रवण कुमार' नाटक के पश्चात उत्पन्न जिस सत्य, मातृ-पितृ भक्ति का उल्लेख किया है उसकी मूल प्रेरणा में पारसी थियेटर तथा कथावाचक को उपेक्षित नहीं किया जा सकता। "हिन्दी नाटक का उद्भव और विकास" तथा "हिन्दी नाटक" ग्रन्थों में डॉ. दशरथ ओझा तथा श्री गुलाबराय ने पं. राधेश्याम के मंचित नाटकों को पारसी शैली के उत्तम नाटकों में माना है।

न्यू अल्फ्रेड पारसी थियेटर कम्पनी के नाटक पण्डित जी द्वारा रचित नाटकों से लगभग 20 वर्ष पूर्व अश्लील तथा फूहड़पन

होता था। पं. राधेश्याम के नाटकों से कम्पनी को एक नया जीवन मिला। जब अहमदाबाद में नाटक 'भक्त प्रहलाद' कम्पनी ने खेलना आरम्भ किया तो 22 दिन तक लगातार दिखाया गया था। भारत-माता (नाटक) का मंचन जलन्धर कन्या महाविद्यालय की छात्राओं द्वारा किया गया। 'स्त्री दर्पण' तथा सरस्वती पत्र-पत्रिकाओं में स्त्री शिक्षा सम्बन्धी इस नाटक की प्रशंसा की गयी।

पं. राधेश्याम कथावाचक की प्रेस से अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन किया गया। यहाँ हास्य व्यंग्य की पुस्तक अजायबघर छपती थी। 'वियोग कथा' (लेखक जगन्नाथ मिश्र केमल) तिलिस्म-रहस्य की पुस्तक 'प्रेतलोक', 'भ्रमर' (मासिक पत्रिका), श्रीमद्भागवत गीता (पं. राम नारायण पाठक), 'भगवत गीत' (पं. माधव प्रसाद शुक्ल), प्रहलाद चरित्र (पं. रामनारायण पाठक) वीरवाला 'मशीरिकी हूर', 'सतलड़ी' कहानी संग्रह (जगेश्वर नाथ वर्मा), मोहन गीतावली (मदन मोहन लाल जी कृत) 'ध्रुव चरित्र (सहाय तमन्ना) सहित अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन श्री राधेश्याम प्रेस से किया गया।

लगभग सभी चिन्तक-विचारक श्री राधेश्याम की शैली को लेकर आगे बढ़े। रुहेलखण्ड की साहित्यिक परम्परा में पं. राधेश्याम कथावाचक तथा उनके सहयोगियों ने पं. राधेश्याम स्कूल को जन्म दिया। इस उद्यमी व्यक्तित्व ने 26 अगस्त 1963 ई. में संसार से विदा ली।

'रामायण' की तर्ज पर पण्डित जी ने 'द्रोपदी चरित्र' लिखा। यह उनकी पहली रचना (कृति) मानी जाती है। राधेश्याम रामायण में जन्म से लेकर राजतिलक की कथा 20 भागों में विभक्त है। यह उर्दू में भी प्रकाशित होती थी। इसी परम्परा में **उत्तर रामचरित** में गायन शैली की अच्छी छाप है। सीता वनवास से लेकर सतवन्ती सीता तक कथा विभाजन विषय को बांधता है।

वैष्णवी विचारों से प्रभावित पं. राधेश्याम जी के ग्रन्थों में गाँधी चिन्तन भी है और कीर्तन भी। ईश्वर प्रार्थना, विद्या-महिमा,

सदाचार-नीति उनके प्रिय विषय हैं। 1928 तक **राधेश्याम कीर्तन** के छह संस्करण छप चुके थे। तत्कालीन मूल्य था -आठ आना।

श्री कृष्ण लीला पर आधारित नाटक का चाल पर गायन युक्त **राधेश्याम विलास** है। इसमें लगभग 250 गीत हैं जो उनके कवि हृदय की पहचान में समर्थ हैं। **'मीठी गुन्जार', 'मधुर मुरली', 'ईसीलीतान' तथा 'कुसुम-कुंज' का सम्पादन पण्डित जी ने 'भ्रमर'** के चतुर्थ वर्ष तक की चुनी हुई कविताओं को संकलित किया है। 'मुसाफिर की पॉकेट बुक' तथा 9400 नाम पतो का संग्रह व्यवसायिक प्रतिभा का परिणाम है। इससे पाठको के स्तर, प्रसार संख्या का पता भी लगता है।

महाभारत का एक महत्त्वपूर्ण पात्र अभिमन्यु बालक ही नहीं शौय-पराक्रम का प्रतीक भी है। पंडित जी के चर्चित नाटक **''वीर अभिमन्यु''** के सन्दर्भ में **'भारत मित्र' समाचार पत्र ने लिखा था** ''वीर अभिमन्यु हिन्दू आदर्शों को सामने उपस्थित करने वाला नाटक है।'' स्टेज पर सफलता पूर्वक मंचित, वीर-करुण रस युक्त अपने पूर्वजों के गौरव तथा कर्त्तव्य परायणता का चित्रण उत्तम रीति से इस नाटक में खींचा गया है। - ऐसी सम्मति तत्कालीन पत्रिका सरस्वती, दैनिक आज (काशी) तथा लाहौर से प्रकाशित दैनिक प्रताप की थी।

न्यू अल्फ्रेड कम्पनी के लिए पं. राधेश्याम कथावाचक ने **''रुक्मिणी मंगल''** (स्त्री प्रधान) नाटक लिखा। इसमें कृष्ण-कंस-वध के पश्चात् की कथा है। राधा-उद्धव संवाद एकदम स्तम्भित कर देता है।

राधेश्याम जी का मूल्यांकन मूलतः एक कवि- कथावाचक रूप में ही किया गया है। नाटककार की प्रतिभा को प्रायः सभी आलोचको ने नजरअंदाज कर किया है। दिसम्बर 1928 में प्रयाग से प्रकाशित ''भारतेन्दु'' (मासिक पत्रिका) में प्रकाशित लेख 'भारत के रंगमंच' में पं. रामधर दुबे ने पं. राधेश्याम तथा उनकी कृतियों पर अनेक भ्रामक सूचनाएँ प्रकाशित हुई थीं।

उक्त संदर्भ में बरेली से प्रकाशित 'भ्रमर' मासिक-पत्र के सम्पादक पं. रामनारायण पाठक ने फरवरी 1928 अंक में लिखा था-

"परिवर्तन तथा अभिमन्यु नाटकों का लेखक पं. रामनारायण बेताव को लेखक ने बताया है। लेख में पं. राधेश्याम जी का कहीं भी उल्लेख नहीं है।

कथावाचक की करतूत शीर्षक में "भारतेन्दु" ने पं. राधेश्याम के नाटकों को साहित्यिक दृष्टि से दो कौड़ी का माना है।"

अन्नी प्रसाद जैसे समीक्षकों के उपहास्यात्मक रवैया के कारण ही पं. राधेश्याम जी के नाटकों का सही मूल्यांकन आज तक नहीं हो पाया तथा वे साहित्यिक परिधि से अलग-थलग कर दिये गये। श्रीवास्तव जी पण्डित जी को उन नाटककारों में नहीं गिने जाते जिन्होंने भारतीय रंगमंच को सुधारने का काम किया है। हकीकत तो यह है कि अब तक किसी नाटककार ने नाटक सुधाने का कार्य ही नहीं किया है।'

"भ्रमर" आगे लिखता है कि "पं. नारायण बेताब तथा पं. राधेश्याम कथावाचक जैसे लोग नाटक सुधारने में आगे बढ़े उन्होंने नाटक लिखकर चले आ रहे प्रवाह को दूसरी ओर मोढ़ दिया।..... नाटक में अच्छे विचारों का समागम हो और दर्शको को मनोरंजन में कमी भी न आने पावे इन तीन कठिनाईयों में रहते हुए यदि कथावाचक जी साहित्यिक पहलू को ऊँचा नहीं उठा सके तो क्या वह बिल्कुल नालायक हैं।"

उनके नाटकों की भाषा, भाव, चरित्र, आदर्श आदि दृष्टि से सुधरे हुए हैं। यह पहले नाटककार हैं जिन्होने नाटकों को पेशेवर कम्पनियों के स्टेजों पर पहुँचाने का उद्योग किया। पेशेवर कंपनियों का स्टेज ही शनैः शनैः हिन्दी स्टेज बनता गया। यह सब पं. राधेश्याम कथावाचक जैसे नाटककारों के प्रयासों व पुरुषार्थ का ही फल है।

अमर उजाला

19 नवम्बर, 1989 ई.

पारसी थियेटर ऋणी रहेगा

पारसी थियेटर की पहली कम्पनी हिन्दू ड्रामाटिक कोर (1853) से लेकर इसके उत्कर्ष काल (1918-1938) तक अल्फ्रेड 'थिएट्रिकल' की समाप्ति के बाद 'न्यू अल्फ्रेड' कम्पनी की स्थापना हुई। इसके माध्यम से नारायण प्रसाद बेताब (इलाहाबाद) आगाहश्र कश्मीरी (वाराणसी) तथा पं. राधेश्याम कथावाचक (बरेली) पूरे उत्कर्ष काल तक छाये रहे। 'श्री सूर विजय कम्पनी' ने राधेश्याम के प्रसिद्ध नाटक 'ऊषा अनिरूद्ध' से ख्याति अर्जित की। इस काल का नाट्य साहित्य अपार रहा है। अत: पारसी रंगमंच के



प्रतिनिधि नाटककार के रूप में पं. नारायण प्रसाद बेताब, आगा हश्र और पं. राधेश्याम कथावाचक ने पौराणिक और पुनरुत्थानवादी प्रवृत्तियों की दृष्टि से ख्याति अर्जित की। पुनरुत्थानी कथावाचक, उपदेशक, गायक ब्राह्मण राधेश्याम को काल विशेष ने इतना महत्त्वपूर्ण नाटककार बनाया और उसे इतना सामाजिक महत्व दिया गया, आज यह बात आश्चर्यजनक-सी लगती है। लक्ष्मी नारायण लाल ने 'पारसी थियेटर और राधेश्याम' लेख में न्यू अल्फ्रेड कम्पनी में उक्त नाटककारो को 'कम्पनी की शरारत' के आधार पर सर्वश्रेष्ठ नाटककार माना है।

उ.प्र. के बरेली जनपद में 25 नवम्बर 1890 में जन्में पं. राधेश्याम कथावाचक का पारसी रंगमंच ऋणी रहेगा। प्रतिभा के धनी

कथावाचक जी ने राधेश्याम रामायण, उत्तर रामचरित, राधेश्याम विलास, राधेश्याम कीर्तन, द्रोपदी लीला, भक्त प्रहलाद, वीर अभिमन्यु, परिवर्तन, रुक्मिणी मंगल, ऊषा अनिरुद्ध, छत्रपति शिवाजी, कृष्ण-सुदामा, पद्यमपुष्पांजलि, घन्टापन्थ, सेवक रूप में भगवान श्री कृष्ण, शांति दूत श्री कृष्ण, कृष्णायन तथा मेरा नाटककार तथा राधेश्याम गीतावली कृतियों का साहित्य जगत में स्वागत हो चुका है। 'भ्रमर' के प्रकाशन से आपकी प्रतिष्ठा साहित्यिक जगत में बहुत हुई। नाटकों में 'वीर अभिमन्यु' को अच्छी ख्याति मिली थी। श्रवण कुमार, ईश्वर भक्ति, सती पार्वती, शकुन्तला तथा महर्षि वाल्मीकि इनके पुनरुत्थानवादी नाटक हैं। साथ ही यह श्रेय राधेश्याम कथावाचक तथा नारायण प्रसाद बेताब जैसे लेखकों को ही है कि आदर्शवादी पौराणिक नाटकों के द्वारा उन्होंने जन साधारण की सोच को परिष्कृत-परिमार्जित करने का कार्य किया। उन्होंने लगभग एक दर्जन से अधिक नाटक लिखे हैं– श्री कृष्णावतार, ईश्वर भक्ति, द्रोपदी स्वयंवर तथा परिवर्तन नाटकों को मैं देख चुका हूँ। ऊषाँ अनिरुद्ध तथा वीर अभिमन्यु को भी रंगमंच की दृष्टि से विशेष सफलता मिली। 'मेरा नाटक काल' में उन्होंने लिखा- आगा हश्र कश्मीरी के अतिरिक्त बेताब और राधेश्याम के नाट्य लेखन में कुछ ऐसे उद्देश्य थे जो उन्हें प्रतिष्ठित और जनप्रिय बनाने में काफी मददगार थे। मैंने इन नाटकों के माध्यम से हिन्दी की सेवा की है। हिन्दुत्व को आगे बढ़ाया है और धार्मिक भावनाओं का प्रचार किया है।



राधेश्याम जी का सम्बंध मूलतः बम्बई की न्यू अल्फ्रेड कम्पनी

से था। हिन्दी नाटक का उद्‌भव और विकास तथा 'हिन्दी नाटक' ग्रंथों में डॉ. दशरथ ओझा तथा गुलाब राय ने उन्हें पारसी शैली का उत्तम नाटककार माना है। न्यू अल्फ्रेड पारसी थियेटर कम्पनी के नाटक पण्डित जी द्वारा रचित नाटकों के लगभग 20 वर्ष पूर्व अश्लीलता-फूहड़पन होता था। राधेश्याम के नाटकों से कम्पनी को एक नया जीवन मिला। अहमदाबाद में 'भक्त प्रहलाद' नाटक 22 दिन तक लगातार दिखाया गया था। 'भारत माता' (नाटक) जालंधर कन्या महाविद्यालय की बालिकाओं द्वारा 192 में मंचित किया गया। 'स्त्री दर्पण' आज सरस्वती आदि पत्रिकाओं ने इनके अच्छे नाटकों की बहुत प्रशंसा की थी। महाभारत का महत्त्वपूर्ण पात्र अभिमन्यु बालक ही नहीं, शौर्य-पराक्रम तथा युवाशक्ति का भी प्रतीक है। पण्डित जी के इस चर्चित नाटक के विषय में 'भारत मित्र' लिखता है- 'वीर अभिमन्यु हिन्दू आदर्शों को सामने उपस्थित करने वाला नाटक है।' स्टेज पर सफलतापूर्वक मंचित, करुणा वीरात की प्रस्तुति अपने पूर्वजों के गौरव-कर्त्तव्यपरायणता का चित्रण उत्तम रीति से नाटक में किया गया है। न्यू अल्फ्रेड कम्पनी हेतु उन्होंने स्त्री प्रधान 'रुक्मिणी मंगल' नाटक लिखा। इसमें श्री कृष्ण-कंस-वध के पश्चात की घटना है। राधा-उद्धव संवाद एकदम स्तम्भित कर देता है। दिल्ली के मोती टाकीज में पं. राधेश्याम के कई नाटकों का उद्‌घाटन पं. मोतीलाल नेहरु ने किया।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा के तत्वाधान में आयोजित राधेश्याम कथावाचक जन्मशती समारोह में पद्मश्री क्षेमचन्द सुमन' ने उनके नाटकों के विषय में कहा– 'पं. राधेश्याम कथावाचक जी को हिन्दी कथा जगत भूल चुका है। उन्होंने नाटकों के माध्यम से साहित्यिक-धार्मिक जगत में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। नाटकों के माध्यम से उन्होंने हिन्दी को जन-जन तक पहुँचाया। नाटक जब अपने शैशवावस्था में था तब आपने पारसी नाट्य शैली के जरिये आपने एक नयी सांस्कृतिक चेतना प्रकट करने का कार्य किया। वे व्यवसायिक रूप से नाटकों में नहीं आये।'

इस अवसर पर आगा हश्र के भतीजे आगा जमाल कश्मीरी ने कहा– "हमारे पूर्वज एवं श्री कथावाचक जी का नाटककाल एक ही है।

कथावाचक के नाटकों से पूर्व श्री आगा हश्र धार्मिक तथा पौराणिक नाटक लिख चुके थे। भक्त सूर उनका पहला नाटक सन् 1914 में श्री आगा हश्र ने लिखा। हिन्दी ड्रामा को तारीखबार लिखे बिना उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।'' काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी प्रवक्ता 'डॉ. नर्मदेश्वर राय' ने कथावाचक जी को सफल नाटककार के रूप में -वस्तुत: श्री राधेश्याम कथावाचक पारसी नाटक के लिये ही जाने जायेंगे। उन्होंने श्री आगा हश्र की नाट्य शैली से भिन्न रासलीला, रामलीला तथा लोक नाट्य शैली (नौटंकी) के मिश्रित रूप को पारसी मंच से प्रस्तुत किया। भारत की गौरवमयी परम्परा को आपने जयशंकर प्रसाद के समान ही महिमा मण्डित करने का कार्य किया। अपने नाटकों से आपने पारसी मंच की आयी अश्लीलता को दूर किया तथा उसे परिष्कृत किया तब लोगों ने समझा कि घर की स्त्रियों के साथ भी नाट्यशाला तक जाया जा सकता है। अनेक विवादों के कारण पारसी थियेटर का मूल्यांकन अभी नहीं हो पाया है। इसके पश्चात् जब भी इसका (हिन्दी-रंगमंच) का मूल्यांकन स्वरूप निर्धारित होगा तभी राधेश्याम जी का मूल्यांकन करना उचित रहेगा।'

पं. राधेश्याम कथावाचक के नाटकों से पद्मश्री चिरंजीत एक लम्बे समय तक जुड़े रहे हैं। आपने पारसी थियेटर शब्द हिन्दू साहित्यकारों की घृणित भावना से उपजा माना है। इस स्थिति में उनका नाटककार और कथावाचक का व्यक्तित्व एक-दूसरे का पूरक है। उन्होंने अपने संस्मरण द्वारा यह बताया कि अमृतसर में राधेश्याम जी के नाटकों की बड़ी धूम थी। उन्हें मैंने आँखों देखा है। अत: जिस नाटक को जनता पसन्द करे वहीं सफल है। पारसी रंगमंच एक सफल मंच था। वे पारसी मंच के लिये ही लिखते थे। यह बात दूसरी है कि हिंन्दी रंगमंच के साथ उसका विरोधाभास है।'

प्राय: सभी आलोचकों ने पं. राधेश्याम जी का मूल्यांकन मात्र कथावाचक रूप में किया है। नाटककार की प्रतिभा को प्राय: सभी ने

नज़रअंदाज कर दिया है। सन् 1928 में इलाहाबाद से प्रकाशित भारतेन्दु (पत्रिका) के दिसम्बर अंक में प्रकाशित लेख 'भारत के रंगमंच' लेखक पं. रामधर दूबे ने पं. राधेश्याम तथा उनकी कृतियों की भ्रामक सूचनायें प्रकाशित की थी। इस विषय पर बरेली से प्रकाशित 'भ्रमर' (मासिक पत्रिका) के सम्पादक ने पं. राधेश्याम कथावाचक के नाटकों के प्रति ओछे विचार रखने वालों की अच्छी खबर ली है– 'परिवर्तन तथा अभिमन्यु नाटको' का लेखक पं. नारायण प्रसाद बेताब को लेखक ने बताया है। लेखक पं. राधेश्याम जी का कहीं उल्लेख नहीं है 'कथावाचक की करतूत' शीर्षक से भारतेन्दु (मासिक) ने पं. राधेश्याम कथावाचक के नाटकों को दो कौड़ी का माना है। अन्नी प्रसाद जैसे समीक्षकों के उपहास्यात्मक रवैया के कारण उनका सही मूल्यांकन आज तक नहीं हो पाया है। वे साहित्यिक परिधि से अलग कर दिये गये। श्रीवास्तव जी राधेश्याम जी को उन नाटककारों में नही गिनते जिन्होंने भारतीय रंगमंच को सुधारने का कार्य किया है। हकीकत तो यह है कि अब तक किसी नाटककार ने रंगमंच (नाटक) सुधारने का कार्य ही नहीं किया है। 'भ्रमर' आगे लिखता है- नाटक में अच्छे विचारों का समागम हो और दर्शकों के मनोरंजन में कमी भी न आये इन कठिनाईयों में रहते हुए यदि कथावाचकजी यदि साहित्य पहलू को ऊँचा नहीं उठा सके तो वे क्या बिल्कुल नालायक हैं। यह पहले नाटककार हैं जिन्होंने नाटकों को पेशेवर कम्पनियों के स्टेजों पर पहुँचाया। पेशेवर कम्पनियों का स्टेज ही शनैः शनैः हिन्दी स्टेज बनता गया। यह सब पं. राधेश्याम कथावाचक जैसे नाटककारों के प्रयासों-पुरुषार्थ का ही फल है भ्रमर (मासिक) फरवरी 1928 ।'

सोहराब मोदी के कहने पर उनकी फिल्म झाँसी की रानी के लिए पं. राधेश्याम कथावाचक ने गीत लिखे थे जो कि चर्चित रहे।

(स्वतंत्र भारतः 17 अप्रैल 1991 ई.)

कथावाचक के नाटकों का संदेश

पं. राधेश्याम कथावाचक व्यक्ति नहीं एक संस्था थे। साहित्यिक जागरूकता एवं अपनी कृतियों के प्रकाशनार्थ उन्होंने सन् 1921 में राधेश्याम प्रेस स्थापित किया। सन् 1922 में उनके मार्गदर्शन में 'भ्रमर' (मासिक) का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। पुष्पों व्यामकरन्द पीने वाला 'भ्रमर' गुन-गुन' कर स्वच्छन्द गाता रहा- वर्ष 1930 तक। अपनी इस यात्रा में 'भ्रमर' को चार सम्पादक (पं. गोपी वल्लभ उपाध्याय, प्रवासी लाल वर्मा, उदय शंकर भट्ट एवं पं. रामनारायण पाठक) मिले।

विविध-विषय-विभूषित 'भ्रमर' मासिक पत्र के प्रथम सम्पादक होने का श्रये पं. गोपी वल्लभ उपाध्याय को प्राप्त है। आपके परिचय के विषय में पं. राधेश्याम कथावाचक 'मेरा नाटक-काल' लिखते है- 'पं. गोपी वल्लभ शालग्राम उपाध्याय जी से मेरा प्रथम परिचय अहमदाबाद में हुआ था। जब आप गाँधी जी की सेवा में थे। गाँधी जी के लिखे हुए 'नवजीवन' का हिन्दी अनुवाद श्री हरिभाऊ उपाध्याय के साथ आप किया करते थे। जो हिन्दी नवजीवन के नाम से निकलता था। सन् 1921 में प्रकाशित हिन्दी नवजीवन गुजराती नवजीवन का हिन्दी रूपान्तर था। इसके गाँधी जी एवं हरिभाऊ उपाध्याय सम्पादक तथा सेठ जमना लाल बजाज प्रकाशक थे। कथावाचकं जी आगे लिखते हैं - 'गोपीवल्लभ का स्वास्थ्य अहमदाबाद में ठीक नहीं रहता था, स्नेह बढ़ने पर उन्हें बरेली (राधेश्याम प्रेस में) बुला लिया। आपके आने के पश्चात् प्रेस से 'भ्रमर' नामक मासिक पत्र निकाला गया जिसके प्रथम सम्पादक आप ही बने 'श्री गोपी वल्लभ उपाध्याय।'

हिन्दी के इस यशस्वी पत्रकार को भुलाने का उपक्रम जारी है। हिन्दी और देश सेवा-प्रेम से ओत-प्रोत मन, शुद्ध खद्दर पहनने का व्रत सच्चाई और ईमानदारी वाली प्रवृत्तियों का प्रतीक पं. गोपीवल्लभ उपाध्याय

की जन्म भूमि आगर (मालवा) थी। सन् 1957 की सूचनानुसार यही पता चल सका कि अंतिम समय में वैराग्य-प्रेरित होकर श्री नित्यानंद आश्रम धार मध्य भारत में रहते रहे।

पं. राधेश्याम कथावाचक के विश्वास पात्र मित्रों में उपाध्याय जी का स्थान सम्मानजनक था। इस आत्मीयता का परिचय सन् 1924 के एक संस्करण में - 'अचानक आगरे से न्यू अल्फ्रेड के नये मालिक का पत्र नये नाटक के विषय में मेरे पास आया।.... नाटक था 'अहल्योद्धार।' नाटक के प्रधान लेखक विशम्भर नाथ कौशिक भी कानपुर से आये हुए थे। भोगीलाल और गोपीवल्लभ उपाध्याय मेरे पास बैठे। यह बैठक दिन तक चली। कथानक में भोगीलाल का अधिक हाथ था। उन्होंने अपना पार्ट गौतम को विशेष रूप से उपाध्याय जी से ठीक कराया था बाकी सब नाटक कौशिक जी की लेखनी ने लिखा था।' आगे लिखते हैं- सन् 1924 में बरसात बाद सवेरे मैंने देखा कि उपाध्याय जी झोला-बिस्तरा दबाए राधेश्याम प्रेस में उपस्थित थे। वे यहाँ न्यू अल्फ्रेड की नौकरी छोड़कर आये थे। उन्होंने इस समय कथा वाचक जी ने कहा- 'नाटक कम्पनियों के भीतर का अन्तर्द्वन्द्व बुरा है- कि कोई भी शुद्ध व्यक्ति वहाँ रहकर हिन्दी या देश की सेवा कर सके यह बड़ा कठिन है।

श्री गोपीवल्लभ उपाध्याय जी हिन्दी के अच्छे नाटककार भी थे। यही कारण है कि विभिन्न समाचार पत्रों में लिखित नाटक टिप्पणियाँ मील का पत्थर हैं। मेरा नाटक काल में कथावाचक जी ने 'पं. गोपी वल्लभ शालग्राम उपाध्याय' का उल्लेख किया है। साथ ही 'वीर अभिमन्यु' नाटक लेखन की प्रेरणा में 'स्व. लाला शालग्राम' विरचित 'अभिमन्यु' नाटक नामोल्लेख कथावाचक जी ने किया है। पाठक यह समझ लें स्व. लाला शालग्राम वैश्य मुरादाबाद निवासी थे, जो बाद में जाकर बम्बई में बस गये थे। गोपी वल्लभ उपाध्याय के नाम में 'शालग्राम' शब्द मुद्रण की अशुद्धि हो सकती है। 'त्याग भूमि' की टिप्पणियों में उनका नाम गोपी वल्लभ उपाध्याय ही अंकित हुआ है। सन् 1924 की उक्त घटना के पश्चात - 'श्री गोपीवल्लभ जी कई दिन बरेली रहकर चले गये। इसके आपने वीणा

(इन्दौर), त्यागभूमि (अजमेर), तथा अखण्ड भारत (प्रयाग) आदि पत्रों के सम्पादक विभाग में रहकर हिन्दी और देश की सेवा की है।'

श्री उपाध्याय जी गाँधी जी की नीतियों के पक्षधर, सम्पादक, लेखक पत्रकार थे। उक्त पत्रिकाएँ गाँधी आन्दोलन का ही परिणाम थीं। गाँधी जी, हरिभाऊ उपाध्याय, राधेश्याम कथावाचक, नन्ददुलारे वाजपेयी, क्षेमानन्द 'राहत', रामनाथ लाल 'सुमन', तथा पं. बलभद्र प्रसाद मिश्र जैसे सम्पादकों के साथ पं. गोपीवल्लभ कार्य कर चुके हैं। यह वह समय है जब राजनीति हमारी पत्रकारिता का लक्ष्य था किन्तु यहाँ जिस राजनीति की चर्चा है उसमें हमारी सभी चीजें राष्ट्र उत्थान की सभी बातें - साहित्य, धर्म, दर्शन, कला संस्कृति तथा समाज सुधार सन्निहित थी। यहीं बात है कि इस काल में पत्रकारिता का क्षेत्र अत्यन्त विशाल था। पत्रकारों ने ही हिन्दी को राष्ट्रवाणी का रूप दिया, हिन्दी साहित्य की अनेक प्रवृत्तियाँ पत्र-पत्रिकाओं के ही माध्यम से देश के कोने-कोने में फैली 'त्याग भूमि' में कार्य करते हुए उन्होंने वीणा (इन्दौर) के सम्पादक की मौत पर संवत 1986 में लिखा था - 'ये पंक्तियाँ वज्र हृदय होकर लिखनी पड़ती है कि गत 26 जुलाई की रात को म.भा. हिन्दी साहित्य समिति इंदौर की मुख्य पत्रिका वीणा के सम्पादक पं. अम्बिका प्रसाद जी त्रिपाठी का अचानक स्वर्गवास हो गया। इसे दैवेच्छा के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है ? परमात्मा उनके अनुज को शक्ति दें ! इस विपत्ति में त्याग भूमि और सस्ता साहित्य मण्डल परिवार अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता है। साथ ही 'माया देव का महातम' (श्याम लाल सत्याग्रही हिसार), 'सुदर्शनशतक' (मूल चन्द जैन वत्सल प्रा. साहित्य रत्नालय बिजनौर की प्रकाशित टिप्पणियों में उनकी साहित्यिक जागरुकता का पता लगता है।

नाटककार पं. राधेश्याम कथावाचक जी के नाटकों की समीक्षा 'त्याग भूमि' (सस्ता साहित्य मण्डल अजमेर) पत्रिका के विविध अंको में पं. गोपीवल्लभ उपाध्याय ने 'श्री राधेश्याम नाटकावली' नाम से प्रकाशित की। त्याग भूमि (चैत्र संवत 1985 एवं आषाढ़ संवत 1986) के इन

अंको सहित पत्रिका का प्रताप विशेषांक भी मेरे पास सुरक्षित हैं। राधेश्याम जी इन अंको के विषय में - 'त्याग भूमि के और अंक फाइल में नहीं मिले कहीं रिल (खो) गये अन्यथा नाटकों के विषय में उनकी राय पाठकों के सामने आ जाती पाठकों की सुविधा के लिए इन अंको की सम्पादकीय टिप्पणियों के महत्त्वपूर्ण अंश प्रस्तुत हैं–

"हिन्दी जगत में कितने ही नाटक ऐसे देखे जाते हैं जिन पर रंगमंच पर सफलतापूर्वक खेले जाने योग्य तो लिखा रहता है किन्तु उनमें से अधिकांश इस योग्य नहीं होते इसीलिए स्टेज की बारीकियों से जानकारी रखने वाले व्यक्ति आधुनिक नाटक लेखकों की इस अनाधिकार चेष्टा को उपेक्षा की ही दृष्टि से देखते हैं।" साहित्यिक नाटक और मंचीय नाटक के अन्तर को आपने अच्छी तरह समझा था क्योंकि उन्हें स्टेज की जानकारी थी- 'बरेली निवासी पं. राधेश्याम कथावाचक के नाटक आज पंद्रह वर्ष से बम्बई की न्यू अल्फ्रेड थिएट्रिकल कम्पनी द्वारा भारत के प्राय: सभी बड़े-बड़े शहरों में अभिनीत हो रहे हैं। जिसने नाटकों को एक बार देखा है वह अभी उसकी विशेषताओं को नहीं भूल सकता। उनके नाटकों में चरित्र की महत्ता आदर्श की उच्चता और सामयिकता के साथ गम्भीर-मार्मिक विनोद इतने सफलता के साथ प्रदर्शित किया जाता है कि प्रत्येक विचारवान दर्शक उनकी इस सफलता पर मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।"

आगे वे लिखते हैं - 'पण्डित जी का सबसे पहला नाटक है 'वीर अभिमन्यु।' जब सबसे पहली बार इस नाटक का अभिनय हुआ तो भाव, भाषा, वेशभूषादि की दृष्टि से इस नाटक को देखकर दिल्ली की जनता आश्चर्यमग्न हो गई ! क्योंकि इसके पहले शायद केवल उर्दू नाटकों का ही दौर-दौरा था।.... पण्डित जी का यह नाटक स्टेज पर तो सफलतापूर्वक खेला ही जा रहा है किन्तु इसके साथ इसको पढ़कर साहित्यिक आनन्द का आस्वादन भी भली-भाँति किया जा सकता है। सारांश यह नाटक सभी प्रकार से उपयोगी और पठनीय हुआ है।"

'श्रवण कुमार' पण्डित राधेश्याम कथावाचक जी का द्वितीय पुष्प

है। नाटक का कथानक प्रसिद्ध पितृभक्त श्रवण कुमार से संबंध रखता है। इस छोटे से कथानक पर से इतना सुन्दर नाटक तैयार कर देना इसके रचयिता की मानसिकता और पुष्ट एवं समयोचित कल्याण दायी फल कहा जा सकता है और यह कलपना अपने विषय को यथेष्ट सफलतापूव्रक सिद्ध कर सकी है। किन्तु इस नाटक का प्रहसन विभाग कथानक के लिए सर्वथा उपयुक्त नहीं है।.... क्योंकि इसका मूल कथानक जहाँ त्रेतायुग का चुना गया है, वहीं प्रहसन की कल्पना इस कलियुग के अंधपत्नी भक्त के रूप में की गई है। नाटककार ने दो युग के दो आदर्श सामने रखकर समाज थी। उनमें से वास्तविक और श्रेष्ठ को चुनने का मौका दिया है - (त्याग भूमि वर्ष 2 खण्ड-2 पूर्णांक 19, अंश 1 संवत 1985 चैत्र) गोपी वल्लभ उपाध्याय।''

'त्याग भूमि' (आषाढ़ संवत 1986 का पूर्णांश 22, वर्ष-2, खण्ड 2) अंक भी मेरे पास सुरक्षित है। इस अंक की पृष्ठ संख्या 457 से 460 तक पं. गोपीवल्लभ उपाध्याय ने परम भक्त प्रहलाद, उषा अनिरूद्ध, परिवर्ततन, यशरकीहूर तथा रुक्मिणी मंगल नाटकों की लम्बी समीक्षा एक साथ लिखी है। परम भक्त प्रहलाद को कथानक की घटना 1920 ई. के सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन की घटनाओं के साथ खूबी से संलग्न किया है कि रंगमंच पर अभिनय देखते समय बारम्बार दर्शक को यही भ्रम होता है मानो वह विगत असहयोग आन्दोलन को ही प्रत्यक्ष देख रहा है।.... केवल चर्खा ही स्टेज पर नहीं आने पाया है शेष सब बातें एक के बाद एक दूसरे के क्रम में खूबी से रखे गये हैं। प्रहलाद का कथानक वहीं है। इस नाटक में श्यामलता और प्रमोद दोनों के चरित्र अपूर्ण हुए है। स्त्री चरित्र का आदर्श दिखाना भी इसकी एक खास विशेषता है। अच्छालै पंडित जी इसके लोभी लाल और पाण्डेय जी आदि नाम प्राचीन शैली में रखते।''

'उषा अनिरुद्ध' पंडित जी का चौथा नाटक है। सन् 1924-25 ई. वाली हिन्दू संगठन की धूम के समय इसकी रचना हुई है और ऐसी

प्रत्येक सामयिक घटनाओं को इतिहास रूप में ग्रन्थित कर देना पण्डित राधेश्याम के नाटकों का एक प्रधान लक्ष्य रहता है। अत: इसमें भी आपने शैव वैष्णव झगड़े के रूप में हिन्दू-अहिन्दू संघर्ष को बड़ी सुन्दरता से दिखलाया है। नाटक का कथानक बाणासुर की कन्या उषा और कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध पर केन्द्रित है। इसमें आधुनिक समाज के साधु एवं महन्तों का भी खासा खाका खींचा है। उनकी ऊट-पटांग बातें पढ़कर जहाँ हँसी आती है वहीं उनकी गिरी दशा देखकर आँसू बहाये बिना नहीं रहा जा सकता। चित्रलेखा का चित्रण भी इन नाटकों की विशेषता है।

'परिवर्तन' नाटक के एक विवाद के विषय में उपाध्याय जी लिखते हैं - 'प्रकाशन की दृष्टि से पंडित जी का यह पांचवा तथा लेखक की दृष्टि से यह दूसरा नाटक ही कहा जाना चाहिए। वीर अभिमन्यु की भूमिका में इसके तैयार होने की सूचना निकल चुकी थी। कुछ मनचले समालोचकों का यह कहना कि नाटक स्व.डी.एल.राय (द्विजेन्द्र लाल राय) के 'उसपार' को तोड़कर लिखा गया है। हिन्दी में 'उसपार' सन् 1917-18 तक नहीं निकला और बंगला भाषा तो पण्डित राधेश्याम जानते नहीं। तब यह कैसे संभव है कि पण्डित जी ने इसमें 'उस पार' की तोड़-मरोड़ की है। यह सामाजिक नाटक है। इसमें शराबी वेश्यागामी नायक अपनी पत्नी को छोड़कर कैसा नारकीय जीवन बीता जीता है का चित्रण बखूबी किया गया है। यहाँ लक्ष्मी और चन्द्रा जैसी स्त्रियों का अन्तर आसानी से समझ में आज जाता है। मनुष्य जीवन में दिन-रात जो परिवर्तन होते रहते हैं, अत: इसका 'परिवर्तन' नाम साथर्क भी है।''

पं. राधेश्याम कथावाचक के अन्तिम नाटक 'रुक्मिणी मंगल' के विषय मं गोपी वल्लभ उपाध्याय जी ने कहा ' कथावाचक जी ने इस युग के परमसाध्य भगवान श्री कृष्ण की सम्पूर्ण जीवन लीला को चार छह नाटकों द्वारा रंगमंच पर दिखाने का संकल्प किया है। और इसी आयोजन का प्रथम अंश श्री कृष्णावतार नाम से नाटक के द्वारा जनता के सामने रखा जा चुका है। इस काल तक इस नाटक को पुस्तक प्रकाशित न होने की सूचना महत्त्वपूर्ण है।

पं. गोपी वल्लभ उपाध्याय संस्कृत के भी अच्छे विद्वान थे। इसकी पुष्टि 'भ्रमर' (मासिक) में प्रकाशित 'आत्म निवेदन' कविता से होती है –

अयि देव केशव त्वच्चरणाम्बुज नमाम:।
दिव्यां तनुं त्वदीय हृदये विभावयाम:॥
तेजस्त्वदीयम तश्रतोऽनिशं स्मरन्त:।
मतभेदभूतिलीनं भूय: प्रदीपयाम:।
मात्राभिर्णाभरेतद् व्याप्तं जगत्समस्तम्
सूषे विभषिहंसीत्येतद्विभावयाम:॥
यम भूतपूर्व मेनाममभिरुपरापधारीं।
अभरासुरान व्यमोह: सततं भवन्नमाम:।

बाद में यह कविता सन् 1954 में राधेश्याम पुस्तकालय से प्रकाशित 'भ्रमर गीत माला' में भी प्रकाशित हुई। ऐसे थे पं. गोपी वल्लभ उपाध्याय। नमन है उनकी लेखनी को। उनकी अन्य कृतियों का पता नहीं चलता है। भ्रमर का सम्पादन एवं राधेश्याम प्रेस में आपने वर्ष 1923 तक कार्य किया।

दैनिक स्वतंत्र भारत

1 अक्टूबर 1992 ई.

ग्रामोफोन रिकार्डों में कैद कथावाचक

सन् 2007 में भारत का ग्रामोफोन उद्योग अपने जीवन के सौ वर्ष पूर्ण करेगा। सन् 1907 में इंग्लैण्ड की ग्रामोफोन कंपनी ने दमदम कलकत्ता में रिकार्ड बनाने का कारखाना स्थापित किया। इससे पूर्व भारतीय संगीत के रिकार्ड जर्मनी, इंग्लैण्ड में तैयार होते थे। सन् 1939 तक कारखाना तो वहीं रहा लेकिन कम्पनियाँ कई खुली और बंद हुई। आज भी पुराने रिकार्डों के ढेर में इतनी स्मृतियाँ शेष हैं। महानगर के गौरव पं. राधेश्याम कथावाचक की रचनाओं पर रिकार्ड का सिलसिला 1935 से 60 तक चला। सन् 1960 में सोहराव मोदी की रंगीन फिल्म झाँसी की रानी के गीत कथावाचक जी ने लिखे हैं। कथावाचक जी ने अपने रिकार्डों में स्वयं नहीं गाया है। उसे विभिन्न कलाकारों ने स्वर दिया है। सन् 1940 के आसपास सम्पूर्ण रामायण शीर्षक से रिकार्ड तैयार हुए। नाटक एवं भजन के रिकार्ड भी बने।

पं. राधेश्याम कथावाचक की रचनाओं पर एच.एम.वी. ग्रामोफोन, वीएल फोन एवं कोलम्बिया ग्रामोफोन कंपनी ने रिकार्ड तैयार किये थे। इनमें स्वर दिया है- नारायण गोस्वामी (बरेली), मिस दुलारी (लखनऊ), जानकी बाई (इलाहाबाद), रामकृष्ण चौबे, गिरजाशंकर चतुर्वेदी, भरत लाल एवं मिस शांता एण्ड पार्टी ने। नाटकों में ड्रामा कंपनी के पात्रों के स्वर-संवाद है। इस तरह पं. राधेश्याम कथावाचक की धूम आम जनता से हटकर नवाबों, रजवाड़ों, रईसों एवं कंपनी के अंग्रेज अफसरों तक पहुँची। रचनाओं के बाजार सोहरत एवं नया फलक मिला। यह साधारण उपलब्धि नहीं थी। पं. राधेश्याम कथावाचक का इलेक्ट्रानिक्स युग में प्रवेश का भी यही युग है। जब भी इस दिशा में लिखा जायेगा इस उल्लेख के बिना लेखन अधूरा ही रहेगा। कथावाचक जी अपनी किस्मत आजमाने बम्बई भी गये थे, लेकिन वे सफल नहीं रहे। 'मेरा नाटक काल' में उन्होंने विस्तार से लिखा है। पं. राधेश्याम कथावाचक कृत रामायण का महत्त्व गायन शैली के कारण आज भी कम नहीं हुआ है। उनकी रामायण को कई

लोगों ने गाया है तथा रामायण के रिकार्ड तैयार हुए। बरेली के तैलंग ब्राह्मण नारायण गोस्वामी ने रामायण रिकार्डों को स्वर दिया। एचएमवी कंपनी के सर्वाधिक रिकार्डों में नारायण गोस्वामी का गायन है। रामायण रिकार्डों की अधिक बिक्री से प्रभावित होकर कंपनी ने इंग्लैण्ड बुलाकर सम्मानित किया था। यह महानगर के लिए गौरव की बात है। नारायण गोस्वामी जी का स्वर तेज था। वे बिना माइक के सस्वर हार्मोनियम-तबला पर रामायण गान करते थे। इस आवाज के माध्यम से रामायण की ख्याति नेपाल, बर्मा, भूटान, तिब्बत, श्रीलंका, मलेशिया तथा भारत के कोने-कोने में पहुँची। सन् 1945 के आसपास नारायण गोस्वमी को प्रति रिकार्ड का सौ रुपया भुगतान मिलता था। यह बड़ा पारिश्रमिक था। बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि कथावाचक जी के नाटकों का रचना काल जयशंकर प्रसाद के नाटकों से पूर्व का है। नाटक के इतिहास में इस दिशा में सोचा ही नहीं गया कि कथावाचक के नाटक साहित्यिक कोटि में नहीं आते ? उनके चर्चित नाटकों में वीर अभिमन्यु बेजोड़ है। कोलम्बिया रिकार्डिंग कंपनी ने इस नाटक के आठ खण्डों में रिकार्ड किया था। ट्यून ग्रामोफोन कंपनी ने शकुन्तला नाटक को तैयार किया था। इनमें ड्रामा कंपनी के कलाकारों के स्वर-संवाद एवं गायन हैं। शकुन्तला नाटक का केवल प्लैव ही मेरे संग्रह में है। इस नाटक के छह खण्डों की सूचना है।

कथावाचक जी के जो रिकार्ड मुझे मिले हैं वे एक क्रम में नहीं हैं। मोटे अनुमान में विभिन्न कंपनियों के लगभग पचास रिकार्ड तैयार थे। उनमें सर्वाधिक गायन नारायण गोस्वामी ने किया। यह महानगर में इलैक्ट्रानिक्स मीडिया का प्रारंभिक चरण है। पं. राधेश्याम कथावाचक के रिकार्ड विभिन्न कंपनियों ने तैयार किये हैं। उसका विवरण इस प्रकार है–

रामायण- गायक नारायण गोस्वामी, कथा रामवनगमन, अयोध्या काण्ड (भाग - दो) नं. एफटी ८३८ वीएल ओफोन कंपनी बम्बई। हनुमान-संवाद (भाग-एक-दो) नं. 10243 एचएमवी ग्रामोफोन कंपनी दमदम कलकत्ता। वन यात्रा (अयोध्या काण्ड) नं. 837 ट्यून ग्रामोफोन कंपनी। हनुमान राम संवाद - नं. 10244 एचएमवी कंपनी कलकत्ता।

केवट का राम के प्रति प्रेम (भाग-एक-दो) नं. 348 एचएमवी कंपनी। अंगद संवाद (भाग - तीन-चार) नं. 9067 एचएमवी कंपनी। इस प्रकार नाराण गोस्वामी के इन रिकार्डों का पता चल सका शेष का विवरण प्राप्त नहीं हो सका है। महिला गायिका मिस दुलारी (लखनऊ) के केवल दो रिकार्ड ही मेरे संग्रह में हैं - रामजन्म (भाग-दो) नं. 9776-वीं, 3746 एचएमवी कंपनी कलकत्ता। रामलला ने चित्रकूट भरत मिलाप, 2455 एवं 2464 ट्यून कंपनी गायन किया है।

कथावाचक जी का भजन जय जगदीश हरे, जय जगदीश हरे काफी चर्चित हुआ था। गायिका मिस शांता एण्ड पार्टी ने इसे स्वर दिया था। एक अन्य गीत गायिका गौरी वाला ने गाया था 'ऐ-ऐ श्याम सुन्दर.... कहा मानो मोहे छोड़ो न।' एचएमवी एवं जैनओ ने इसका रिकार्ड तैयार किये थे। 'इस तन में रमा करना उस तन में रमा करना' गीत गाया था रामकृष्ण चौबे ने। गिरजाशंकर चतुर्वेदी गायक ने शरण में आये हैं रिकार्ड में गायन किया था। मेगाफोन कंपनी बम्बई ने इनका रिकार्ड तैयार किया था। इस प्रकार भिन्न-भिन्न गायक-गायिकाओं ने कथावाचक की रचनाओं को स्वर संगीत दिया। कृतियों को नया जीवन मिला। इससे कथावाचक जी की शैली को लोकप्रियता एवं विस्तार मिला।

अभी तक की वीर अभिमन्यु के भाग एक से पांच तक रिकार्ड उपलब्ध हैं। इनकी क्रम संख्या है जीई 18039, 18040, 18048, 18042, 18041 में केवल भजन 'ऐ-ऐ श्याम सुन्दर' गायिका मिस गौरीवाला एवं 'कहामानों मोहे छोड़ों न' गायिका मिस गौरी वाला एचएमवी कंपनी एफटी 3552। 'जय जगदीश हरे' गायिका मिस शांता एण्ड पार्टी नं. पी 661 जैनओ ग्रामोफोन रिकार्ड कंपनी कलकत्ता-बम्बई। 'इस तन में रमा करना' गाना एचएमवी 3810। शरण में आये हैं गायक गिरजा शंकर चतुर्वेदी एनसी मेगा फोन कंपनी के रिकार्डों को खोज सका हूँ। यह रिकार्ड सन् 1935-47 के मध्य तैयार किये गये हैं। आज के सूचना प्रधान युग में ये रिकार्ड इतिहास की वस्तु हैं।

दैनिक जागरण, 26 मार्च, 2000 ई.

कृष्णायन काव्य-परम्परा एवं 'कथावाचक' कृत कृष्णायन

भारतीय साहित्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम एवं योगेश्वर श्री कृष्ण के बिना अपूर्ण है। कवियों ने इन दोनों महापुरुषों को केन्द्र बनाकर ग्रंथ लिखे हैं। हिन्दी के अनेक कवियों ने रामायण (रामायन) की तर्ज पर श्रीकृष्ण चरित्र (कृष्णायन) लिखे हैं। इन कवियों ने यह सब कुछ संस्कृत ग्रन्थों से ग्रहण किया है। पण्डित राधेश्याम कथावाचक कृत कृष्णायन लोकभाषा का ग्रन्थ है। यह हिन्दी के प्रथम कृष्णायन मंचति कवि सं. 1928 के सतहत्तर वर्ष पश्चात् की रचना है। पं. राधेश्याम कथावाचक कृत कृष्णायन की रचना हरियाली तीज संवत 1987 हुआ है, कृष्ण चरित्र उतना ही उलझा हुआ है।.... रामायण की तर्ज पर यह कृष्ण चरित्र एक श्रव्य वस्तु है। साज-वाज के साथ गाकर सुनाई जाने वाली कथा है। बुन्देलखण्ड के प्रथम कवि मंचित ने कृष्णायन ग्रन्थ रचने वाले कवि हैं - खुमान (सं. 1938); जगन्नाथ दास (सं. 1845); बिहारीदास (सं. 1928); बसन्त महाराज (सं. 1942); पं. राधेश्याम कथावाचक (सं. 1987); पं. रामस्वरूप विशरद (सं. 1928); पं. द्वारिका प्रसाद मिश्र (सं. 2025) तथा कवि बाबूराम (सं. 2027)। पं. राधेश्याम कृत कृष्णायन में पिंगल एवं छन्द, अलंकार एवं भाषा सौन्दर्य का निर्वाह हुआ है या नहीं। लेकिन लोकशैली में लिखित कृष्णायन का धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं राष्ट्रीय महत्त्व भी है। कथावाचक कृत कृष्णायन में आठ कथा खण्ड हैं – जन्माष्टमी, नन्द महोत्सव कमला वाला कृष्ण कन्हैया; गिरवरधारी, रास रहस्य, कंस वध; नन्दनन्दन वसुदेव एवं नंद विदाई। शिवमंगल सिंह 'सुमन' की दृष्टि में कथावाचककृत यह ग्रन्थ सरल भाषा में गायन की दृष्टि से सर्वोत्तम है।

गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित कल्याण के श्री कृष्णांक (सन्

1931 ई.) में पं. राधेश्याम कथावाचक कृत 'कृष्णायन' जन्माष्टमी कथा खण्ड की कविता प्रकाशित की थी देवकी का स्वप्न। कथा के प्रारम्भ में कृष्णावतार की परिस्थितियों, तिथि आदि का उल्लेख-

'ईश्वर प्रार्थना कर रहे थे नर रत्न अनेक।
उधर देवतु मातु ने स्वप्न निहारा एक॥'

यहाँ केवल कृष्णावतार की आवश्यकता एवं परिस्थितियों का चित्रण ही नहीं परतंत्र भारत की कालिमा का भी चित्रण है। इस बिम्ब में - 'नीचे रक्त सागर था लाल, जिसमें सब सृष्टि धंस रही थी। कथावाचक जी ने प्रतीकों द्वारा बहुत कुछ कह दिया है–

"इधर उथल-पुथल में देखा, सब प्रकृति नवीन हो चली है
जग में यह लालिमा है,कालिमा विलीन हो चली है
इतने में यह मूर्ति ने बढ़ा दिया आकार।
वह बढ़ती थी हो रहा था छोटा संसार।"

यहाँ गाँधी का भारतीय राजनीति में बढ़ते प्रभाव की भी चर्चा है। उनकी अहिंसात्मक नीतियों का संरक्षण पाकर भारतीय राजनीति को नई दिशा-मार्ग मिला। निराला, पंत आदि कवियों की तरह कथावाचक जी ने गाँधी जी की तुलना योगेश्वर श्रीकृष्ण से की है। यह ग्रन्थ भक्ति-ज्ञान के साथ-साथ सामाजिक चेतना पर गहरे चिंतन का परिचायक है।

कृष्णायन प्रबन्ध काव्य हैं। कथावाचक जी ने इसमें लोकतंत्र के नायक गाँधी को जन-जन का प्रतीक मानकर उनकी तुलना श्रीकृष्ण से की है। अभियन्ता में एकता लोकतंत्र का प्राण है– "कृष्ण वहीं बसते हैं, जहाँ मैं-तू का झगड़ा न हो।' सभी जानते हैं भारतीय राजनीति जेल की सलाखों के पीछे पुष्ट हुई है। जेल में श्रीकृष्ण का जन्म, देवकी-वसुदेव की यातनाएँ, कंस साम्राज्य, कंस वध आदि कथा प्रसंग ब्रिटिश साम्राज्य के अत्याचारों को याद दिलाते हैं कंस का राज्य ही ब्रिटिश साम्राज्य है। भारत माता की आजादी के लिए गरम-दल, नरम दल ने अपने-अपने तरीके से लड़ाई लड़ी। दोनों का लक्ष्य एक ही था – आजादी। लेकिन गाँधी की

नीतियाँ उसकी चूलें हिलाने में कामयाब रहीं। कथावाचक जी का कृष्ण अष्टम लाल-

-'जो आँखे बाट जोहती थीं, उन आँखो का तारा हूँ।
हे ! कारागृह की तपस्विनी, मैं अष्टम लाल तुम्हारा हूँ।।'

यहाँ वासुदेव-देवकी-कृष्ण तथा बृज और बृज के जन भारत का प्रतीक बन गये है। कथावाचक जी ने यथास्थान गानों में देश-भक्ति की भावना को इस रूप में -

'भारत में आया फिर से, आया गिरवर उठाने वाले।
स्त्रोतों को फिर से जगाना, गीता के गाने वाले।।
जाति-पांति का वहीं जिक्र क्या ? प्रेम है जहाँ प्रधान
नाथ फिर डूबते भारत को जगाने आओ।
भाग्य फिर सोते हुए भारत का जगाने को है।
बंशी वलो खूब गाया- रागे उल्फत देश में।
वीरता के शंख की अब जरूरत है देश में।।

कृष्णायन की कथा आठ दिन में गायन द्वारा समाप्त होने वाली कथा है। कवि ने मंगलाचरण में श्रीगणेश, शंकर, श्रीकृष्ण तथा वाग देवी सरस्वती का आह्वान किया है ताकि पवित्र ग्रंथ अबाध रूप में पूर्ण हो सके। आर्यवर्त हरिद्वार जान्हवी के तट पर व्याप्त पुत्र शुक ने नृपति परीक्षित हेतु श्रीमद्भागवत नवस्कन्ध की कथा का वर्णन- 'नवस्कन्ध तक कथा कह चुके पवित्र, तब बोले राजन सुनो, अब श्रीकृष्ण चरित्र।

हिन्दी साहित्य में कृष्णायन प्रबन्ध काव्य की परम्परा अपने ढंग की निराली हैशतक, सतसई, हजारा की परम्परा सें बढ़ कर हैं यह परम्परा क्योंकि कृष्णायन प्रबन्ध काव्य हैं। अनेक आलोचकों ने इस ग्रन्थ को हल्के रूप में लिया है। ऐसे आलोचक कथावाचक के कृष्णायन की मात्र गणना करते हैं। उसे साहित्य की कोटि में नहीं मानते। लेकिन वे यह भूल गये हैं कि कथावाचक जी ने यह ग्रन्थ देश की आम जनता के लिए आम भाषा में लिखा है। तथा रामकथा के समान ही लिखकर उन्होंने हिन्दी की

महान सेवा की है। उसमें लोक संस्कृति, लोकजीवन एवं राष्ट्रीयता का स्वर भी है। अत: यह अन्य कृष्णायनों से थोड़ा भिन्न भी है। इसमें भक्ति कालीन तथा मध्यकालीन कृष्ण भक्तिभावना राष्ट्रीयता और भक्ति की आध्यात्मवादी चेतना मिलकर काव्य और युग को अबाध संदेश देने के लिए कृष्णायन कटिबद्ध है। कथावाचक जी लोक भाषा के कवि हैं और उनका लोकनायक श्रीकृष्ण गाँधी की तरह पूरे देश (ब्रज) को बाँधकर चलता है। राष्ट्रीय अखण्डता एवं एकाता में ही उसका लोकनायकत्व छिपा है। कृष्ण भारतीय राजनीति की धड़कन का नाम है। कृष्ण के समान गाँधी ने भी इस धड़कन की आहट को सुनकर भारतीय राजनीति को नयी दिशा दी। अत: कृष्णायन का गाँधीवादी महत्व भी है। कृष्णायन गाँवों के विकास उनको एकता के सूत्र में बाँधने, भाषा, संस्कृति, पर्व, लोकाचार आदि के रुप में उनक लोक स्वरुप का रक्षक भी है। यही कृष्णायन का लोकनायकत्व है।

संवाद केसरी
9 जनवरी, 2000

वाल्मीकि तुलसी भयो, तुलसी राधेश्याम

पं. राधेश्याम कथावाचक जी का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था। यह नाम हिन्दी-साहित्य की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। प्रतिभा के धनी कथावाचक जी ने लगभग 50 ग्रन्थों का सृजन-सम्पादन किया। रामायण की कथावाचकीय शैली उनकी कृतियों में एक नये रूप में ढली। 'दिवंगत हिन्दी सेवी' (भाग-1) ग्रन्थ में श्री क्षेमचन्द्र सुमन ने कथावाचक जी के कृतित्व-व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है। 'श्री राधेश्याम गीतावली' में रुहेलखण्ड के चर्चित विद्वान एवं भू.पू. संस्कृत विभागाध्यक्ष बरेली-कॉलेज ने (स्व.) पं. भोलानाथ शर्मा ने सन् 1910 में लिखा–"कविरत्न पं. राधेश्याम कथावाचक ने अपने कवि जीवन के आरम्भ से ही भारत के हृदय को भली-भाँति समझ कर उसी परम्परा को अपनाया जो जाने-अनजाने में प्रत्येक भारतीय के रक्त में घुली-मिली हुई है। आपने राम और कृष्ण लीला को मुख्यतया अपने कवि-कर्म का विषय बनाया।

पण्डित जी की महान सफलता का रहस्य है उनके द्वारा भारतीय परम्परा में रामभक्ति एवं सदाचार प्रियता की महत्ता की स्वीकृति। जिस प्रकार तुलसीदास जी के 'भाखा' प्रयोग पर आपत्ति की गई थी उसी प्रकार कुछ महानुभाव यहाँ तक कहते सुने गये 'तुलसीदास के काव्य की हत्या पं. राधेश्याम ने की है।' कुछ महानुभाव ऐसे भी हैं जो उन्हें तुलसी का अवतार मानते हैं। राधेश्याम जी की रामायण 'मानस' के प्रचार में सहायक ही हुई है। उनके सन्दर्भ में 'सूर' की यह पंक्तियाँ– बड़ी है राम-नाम की ओट।'

'राधेश्याम-कीर्तन' की भूमिका में कथावाचक जी ने लिखा है– "मुझे बाल्यावस्था से ही मेरे पूज्य पिता (श्री पं. बाँके लाल) ने गायन, हारमोनियम और कथा का अभ्यास कराया था। मुझे खूब याद है कि मैंने नौ वर्ष की अवस्था में अच्छी तरह हारमोनियम बजाकर, ताल स्वर से श्री

गोस्वामी तुलसीदास जी की रामायण बाँची थी।...जिन दिनों मेरी अवस्था बारह वर्ष की थी उन्हीं दिनों मेरे पिता के गुरु श्री 108 स्वामी रामदास का काशी से बरेली आगमन हुआ। उनके दरबार में रामकथा सुनने के साथ-साथ मुझे 'तुकबन्दी' का शौक लगा।..मैं कृष्ण भक्ति की ओर झुका। मेरी अवस्था बढ़ी, फैशनेबिल बना। उपन्यासों, समाचार पत्रों का शौक हुआ, देशभक्ति के भजन भी बनाये। समय ने मुझे रामचरित मानस को छन्द (गाना) में बनाना प्रारम्भ कराया। क्रमशः रामभक्ति बढ़ी। श्रोताओं को यह रामायण भी रूचिकर लगी।''

सन् 1910 तक पण्डित राधेश्याम कथावाचक तुलसी कथा के साथ-साथ स्वरचित रामकथा को भी हारमोनियम पर बाँचने का श्री गणेश कर चुके थे। सन् 1910 में हाथरस तथा मुरादाबाद की प्रेस में छपी रामायण को मैं वाराणसी में देख चुका हूँ।

पं. राधेश्याम कथावाचक ने होश सँभालते ही तुलसीकृत रामायण का पूर्ण स्वाध्याय कर लिया था। तभी से वे देशाटन करने लगे। आनन्द भवन इलाहाबाद, काशी विश्वनाथ मन्दिर वाराणसी, हरिद्वार, दिल्ली आदि नगरों में आपने तबले-हारमोनियम पर रामकथा द्वारा तुलसी के राम को जन-जन तक पहुँचाया। रामकथा के क्षेत्र में जो कार्य महर्षि बाल्मीकि ने अपनी रामायण द्वारा किया तुलसी ने उसे 'रामचरितमानस' के माध्यम से लोक मंगल का आधार बनाया। लेकिन कथावाचक जी ने अपनी रामकथा खड़ी बोली में लिखकर राम को जन-जन तक पहुँचाया। नेपाल नरेश के दरबार में 'कथावाचस्पति' के सम्मान से अलंकृत होने पर उन्होंने कहा–'बाल्मीकि तुलसी भयो, तुलसी राधेश्याम।'

सन् 1910 में उनके रामायण का प्रकाशन आगरा, मुरादाबाद तथा हाथरस प्रेस से प्रारम्भ हुआ। श्री राधेश्याम रामायण के किष्किन्धा काण्ड, विभीषण की शरणागति आदि रामकथा खण्ड का प्रकाशन मुरादाबाद की लक्ष्मीनारायण प्रेस से होता था। वर्ष 1916 तथा 1917 ई. की प्रतियों में तृतीयावृत्ति में तीन-हजार प्रतियाँ तथा मूल्य तीन आना

अंकित है। मुरादाबाद की इन प्रतियों में प्रिन्टर्स के स्थान पर कैलाश चन्द्र शर्मा तथा विश्वनाथ शर्मा का नामोल्लेख है। पाठकों को इन प्रतियों में विश्वनाथ शर्मा का नाम देखकर पं. राधेश्याम कथावाचक के बड़े पुत्र का सन्देह अवश्य होगा। पं. राधेश्याम जी के बड़े पुत्र विश्वनाथ शर्मा की जन्म-तिथि 1931-32 के आस-पास है। अतः स्पष्ट है वर्ष 1916 के संस्करण में प्रकाशित विश्वनाथ शर्मा नाम प्रेस मालिक का है, न कि कथावाचक जी के बड़े पुत्र का।

पं. राधेश्याम कृत रामायण सन् 1917 में आगरा के गोस्वामी प्रिन्टर्स प्रो. ब्रजनाथ शर्मा कॉरनेशन प्रेस, शीतल स्ट्रीट से भी प्रकाशित होती थी। रामकथा (अयोध्याकाण्ड) दशरथ का प्रतिज्ञा पालन खण्ड, द्वितीय बार चार हजार की संख्या में प्रकाशित हुआ। मूल्य था तीन आना। परशुराम सम्वाद, बाल-काण्ड कथा-प्रसंगों में तिथि श्रावणी सम्वत् 1972 तथा अगहन सं. 1971 का उल्लेख है। सुन्दर काण्ड अशोक वाटिका कथा खण्ड में आश्विनी सं. 1965 तिथि का उल्लेख है। कथावाचक जी के रामकथा के इन खण्डों से रामायण की प्रामाणिक तिथि का पता लगता है। आगरा संस्करण कथा खण्ड के चित्र में पुस्तक रचयिता, कीर्तनकलानिधि, कविरत्न पं. राधेश्याम कथावाचक बरेली का श्याम-श्वेत चित्र हारमोनियम पर कथा बाँचने की मुद्रा में प्रकाशित हुआ था। दूसरा चित्र मुरादाबाद संस्करण में मालवीय जी की वेशभूषा में खड़े होकर, कथा बाँचने की मुद्रा में प्रकाशित हुआ था। इन पुस्तकों में कथा-प्रसंगों को उसी रूप में प्रकाशित किया है जिस रूप में वे कथा कहते थे। यथा,सुग्रीव ने हनुमान से कहा–

"हे हनुमान ! देखो तो सही,
दो पुरुष इधर को आते हैं।
दोनों वनवासी, योगिराज
या राज सिंह दिखलाते हैं।।

हनुमान, रामजी से पूछते हैं-

खौफ़नाक है यह जगह,
दुस्तर और गम्भीर।
महाराज ! तुम कौन हो,
श्यामल गौर शरीर ?''

सन् 1922 ई. में श्री राधेश्याम कथावाचक ने अपने ग्रन्थों के प्रचार-प्रसार हेतु राधेश्याम पुस्तकालय नाम से प्रेस की स्थापना अपसने निवास बिहारीपुर, बरेली में की। कथावाचक जी देशाटन करते और कथा बाँचते थे। इस बीच प्रेस का कार्य पं. घनश्याम शर्मा तथा पं. रामनारायण पाठक देखने लगे। सन् 1936 के आस-पास कथावाचक जी के ग्रन्थों की बढ़ती लोकप्रियता को ध्यान में रखकर उनके हस्ताक्षर तथा चित्र को ग्रन्थों पर प्रकाशित किया जाने लगा। सन् 1920 तक के ग्रन्थों में मात्र नामोल्लेख है। चित्र को अलग से ग्रन्थ के साथ जोड़ा जाता था। सन् 1923 तथा सन् 1936 के संस्करण आज भी मेरे पास सुरक्षित हैं। इनमें कथा के अन्त में प्रामाणिक रचनाकाला, कथावाचक जी का नाम तथा कथा की सम्वाद शैली को समाप्त कर दिया गया है। ग्रन्थ के मुख-पृष्ठ पर संस्करण की तिथि का उल्लेख अवश्य हुआ है।

आजादी के बाद तक कथावाचक जी की रामायण हिन्दी-उर्दू में प्रकाशित होती थी। रुहेलखण्ड में उर्दू भाषा के कारण ही उनकी रामायण को जितनी प्रसिद्धि मिली उतनी किसी अन्य ग्रन्थ को नहीं। उस समय उत्तर भारत की अधिसंख्य मनुष्यों की भाषा उर्दू थी, न कि हिन्दी। उर्दू मिश्रित खड़ी बोली की रामायण जन-जन तक पहुँच चुकी थी। इस विषय में क्षेमचन्द्र सुमन ने लिखा है–''जब राधेश्याम रामायण जन साधारण में लोकप्रियता के शिखर को छू गयी तब उन्होंने रामायण की तर्ज पर अन्य ग्रन्थ लिखे।''

पं. राधेश्याम कथावाचक की रामायण के नवीन संस्करण में लव-कुश की वीरता; सीता-वनवास; रामाशवदेव; सीताविजय आदि कथाखण्ड

पं. मदनमोहन लाल शर्मा द्वारा विरचित हैं। यह राधेश्याम जी के अनुज थे। राधेश्याम की बढ़ती लोकप्रियता के कारण राधेश्याम पराशर तथा तर्ज राधेश्याम मुद्रित नकली पुस्तकों के संस्करण बाजार में बिकने के कारण सन् 1978 के संस्करण में पुस्तकों के पीछे पं0. गिरीश चन्द्र शर्मा का चित्र प्रकाशित किया जाने लगा है ताकिं नकली प्रकाशनों से पाठक बच सकें।

पं. राधेश्याम रामायण में अर्थ के लिए कोई स्थान नहीं। कथावाचक की इस अनूठी और सरल भाषा-शैली इतनी प्रचलित हुई कि लेखक ने कथा बाँचने के कारण अपने नाम के आगे 'कथावाचक' शब्द ही जोड़ लिया। पण्डित जी ने स्वयं इस 'कथावाचक' उपनाम को अपने व्यक्तित्व का पूरक माना है। गत दिनों काशी नागरी प्रचारिणी सभा में आयोजित उनके जन्मशती समारोह (16 जनवरी 1991) में एक वक्ता नो कहा ''कविता (रामायण) और नाटक के बीच हुई चर्चा में यह निष्कर्ष निकला कि इसमें कथावाचक जी हाशिये पर आते हैं। देखना ये है कि वे जनता के बीच क्यों प्रसिद्ध हैं। तुलसी-वाल्मीकि की परम्परा में आपनी रामायण में उर्मिला-सुलोचना प्रकरणों के कारण उन्होंने तुलसी के कथा प्रसंगों की साहित्यिक व्यक्तित्व की पहचान खतरे में हैं।'' एक प्रसंग में डॉ. कैलाश नाथ तिवारी ने उनके 'कथावाचक' नाम को हटा देने का सुझाव दिया था। आगाहश्र के भतीजे आगाजमाल काश्मीरी तथा कथावाचक जी के प्रपौत्र काशीनाथ शर्मा ने उनके नाम के आगे लगे कथावाचक शब्द को उनके व्यक्तित्व का पूरक माना है। इसके बिना उनकी पहचान अधूरी ही रहेगी। वस्तुतः आज जन साधारण उनकी पुस्तकों को पं. राधेश्याम कथावाचक के नाम से ही जानता और खरीदता है। राधेश्याम रामायण अपनी अनूठी शैली, सरल भाषा, सीधे अर्थ ग्राह्य क्षमता तथा प्रचलित कहावतों-मुहावरों के कारण आज भी प्रचलित है-

''जब मैंने तेरा नाम लिया,
तो उसने मुझको दी गाली।
मेरे कान कतर डाले,

मेरी यह नाक काट डाली।।
मेरी नाक गयी सो गयी,
अब अपनी नाक संभालो तुम।
जग में अब ऊँची नाक नहीं,
तो नकटा नाम धरालो तुम।।''

(पंचवटी कथा खण्ड से)

'कथावाचक' की कथा, उनके ही शब्दों में

''जब मैंने होश संभाला तो रंग बदला हुआ था चौबोला, लावनियों आदि का चलन था। भाषा मिली-जुली, गिरी-पड़ी मिश्रित और सरल थी। इसके कुछ ही दिनों बाद 'खड़ी बोली' नाम से लिखाई शुरू हुई। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती मासिक पत्रिका द्वारा उमंगें बढ़ा दी।...उसी जमाने में मैंने अपनी रामायण लिखनी शुरु की। कथाएँ तब बन्द-सी हो रही थीं। 'तुलसी रामायण' बिना अर्थ समझाए कोई नहीं समझता था। मेरी रामायण सामयिक भाषा में होने के कारण तथा हारमोनियम पर गायी जाने की वजह से चल पड़ी। 'कथा' और 'वाचक' दोनों को मिलाकर 'कथावाचक' नाम मैंने ही अपनाया और 'राधेश्याम' के साथ जोड़ लिया।''

गुरु पूर्णिमा सम्बत् 2011 में कहे गये इन शब्दों में पं. राधेश्याम 'कथावाचक' नाम की सार्थकता निहित है।

आनंद मंजरी (मासिक) : नवम्बर, 1991

कथावाचक स्कूल के सिपाही कवि पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र

बरेली के पण्डित राधेश्याम कथावाचक अपने जीवन में ही एक संस्था बन चुके थे। उनके बहुआयामी कृतित्व-व्यक्तित्व से प्रेरणा ग्रहण कर रुहेलखण्ड की अनेक काव्य प्रतिभांओं को विकास पथ मिला। पं. रामनारायण पाठक, राम सहाय तमन्ज, शंकर सहाय वी.ए. मुंशी मथुरा प्रसाद 'मधुरेश' कवि, पं. बांधेलाल जी महाराज, श्रीमति प्रियवंदा श्रीवास्तव, श्री 108 स्वामी रामदास, जगन्नाथ मिश्र 'कमल', जगेष्वर नाथ वर्मा, पं. मदन मोहन लाल सहित पं. ज्वाला प्रसाद वी.एस सी आदि प्रतिभाएँ इसी युग में चमकी। राधेश्याम पुस्तकालय (प्रेस) ने राधेश्याम स्कूल के कलाकारों को एक साहित्यिक मंच दिया। इस मंच से जुड़े पं. ज्वाला प्रसाद वी. एस.सी. ने अपनी अलग पहचान बनाने की कोशिश की थी।

रायगढ़ (म.प्र.) रियासत के नायब दीवान पं. बलदेव प्रसाद मिश्र के पुत्र पं. ज्वाला प्रसाद राजनाँद गाँव के निवासी थे। पीलीभीत निवासी स्वर्गीय राजा ललिता प्रसाद के यहाँ वे भूसम्पत्ति के मैनेजर होने के साथ-साथ ज्योतिष के पण्डित थे। इस विषय को उन्होंने अपने पिता जी से पढ़ा था। राजा ललिता प्रसाद के साहित्य प्रेम ने उन्हें साहित्य सृजन की ओर प्रेरित किया। पं. ज्वाला प्रसाद बरेली से प्रकाशित पत्रिका 'भ्रमर' के नियमित लिखते थे। 'भ्रमर' के दिसम्बर 1928 अंक में उनका एक लेख हिन्दी में 'वीर रस' प्रकाशित हुआ था। इसमें उन्होंने लिखा ''कहने को तो रस राज शृंगार प्राचीन हिन्दी का प्राण है पर उसका प्रथम दर्शन वीर रस को गोद में लिए हुए ही होता है।..... छन्द कल्पना के क्षेत्र से घूमने वाले कोरे कवि ही न थे वे योद्धा भी थे।....उस समय की स्थिति को देखते हुए कविता की भाषा तथा भाव भी बदल गये हैं। देश के लिए ऐसी

कविता कभी कल्याणकारी नहीं हो सकती है।''

'महिषासुर वध', 'दुर्गा चरित्र', 'ज्योति प्रकाश' तथा 'शुम्भ का उत्पात' आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ है। इन सबमें वीर रस की प्रधानता है। रचनाओं में छन्द विधान का पूरा ध्यान रखा गया है। गायन में लोक संस्कृति तथा रंगमंच का शास्त्रीय प्रभाव है। अधिकांश रचनाएँ शक्ति आराधना के पवित्र संकल्प से खड़ी बोली में लिपिबद्ध हैं। उनकी शैली कथावाचकी तथा पण्डिताऊ पूर्ण है।

'महिषासुर वध' का विशेष भाग 'भ्रमर' मासिक के सितम्बर 1928 अंक में प्रकाशित हुआ था। ज्वाला प्रसाद कृत यह रचना 'ज्योति जयति जगदम्बिके, जय करुणा की खान' से प्रारम्भ है। इसका अन्तिम गायन इस प्रकार है–

''इस जग की माया में पड़कर तू हंसता है
अब भी चेत समय है अब भी क्यों फंसता है
वही ''ज्वाला'' बतलाता है।। व्यर्थ''

''ज्योति प्रकाश'' का प्रकाशन राधेश्याम प्रेस (बरेली) से हिन्दी-उर्दू में होता था। 1928 में इस ग्रन्थ का मूल्य था- एक रुपया। पं. ज्वाला प्रसाद ने ज्योतिष का ज्ञान सर्व साधारण लोगों को कराने के उद्देश्य से लिखी थी। वे स्वयं ज्योतिष के उच्च विद्वान थे।

''दुर्गा चिरत्र'' शक्ति उपासकों के लिए ज्वाला प्रसाद ने लिखा सन् 1927 में। भ्रमर अक्टूबर 1928 में इसका शेष भाग विशेषांक रूप से प्रकाशित किया गया है ताकि पत्रिका रूप में लोग कृति से परिचित हो सकें। इस अंक में प्रकाशित कृति का श्रीगणेश - ''बोला समाधि सच है पर यह ममता न भुलाई जाती है'' से हुआ है। आगे की पंक्तियों में शक्ति का पवित्र संकल्प–

''तू तो माता बनी, भ्रांति, भंजनि शान्ति।
तू ही है कहला रही कान्ति दायिनी शान्ति।।
खड्ग शूल भीषण गदा चक्र शंख और धाप।

वाण भुशुंडी परधि है, तेरे शस्त्र कलाम।।
सौम्या तू है सौम्य से, सुन्दर सुखद स्वरूप।
पर परों से भी परे परमेश्वरी अनूप।।''

दुर्गा चरित्र मातृ शक्ति का पवित्र आराधना भी है और माँ भारती का चिन्तन भी। रुहेलखण्ड के प्रसिद्ध लोकगीत ''चौबोला' में वीर रस का समावेश-

''अब भी हम में हैं प्राण शेष।
आओ अब भी हर लो क्लेश।।
माँ रणचण्डी बनकर,
दिखलाओं अपना रौद्रवेश।
अन्यथा न कुछ हो पावेगा
''ज्वाला'' अवसर बीतेगा जब।।'

छन्द में अपना नामांकित करने की परम्परा को ''राधेश्याम स्कूल'' के सभी रचनाकारों ने एक रूप में स्वीकार किया है। पं. ज्वालाप्रसाद के छन्दों में भी यह प्रवृत्ति है। संस्कृति के चरित्र ग्रन्थों में दुर्गा सप्तशती पर आधारित पं. ज्वाला प्रसाद मिश्रकृत 'दुर्गा चरित्र' में पं. राधेश्याम रामायण तर्ज पर इस ग्रन्थ में युगीन काव्य प्रवृत्तियों को स्वीकार किया गया है। 'महिषासुर' में महिषासुर वध की कथा वर्णित है। 1928 में इस ग्रन्थ का मूल्य था एक रुपया। पृष्ठ : 32, प्रकाशक : राधेश्याम प्रेस, बरेली।

'शुम्भ का उत्पात' (शेष भाग) दिसम्बर 1928 के 'भ्रमर' में प्रकाशित है। प्रारम्भ की पंक्तियों ने (गायन) देश प्रेम का सन्देश - ''देश के गम को तथा देश की कलियां खिला सकती है।'' इसके लिए आवश्यक है कि भारतीय मातृ शक्ति का प्रतीक नारी का सम्मान करना सीखे-

''नारी सुख का मूल है, नारी सुवा की खान।
नारी का सम्मान कर, होते मनुज महान।।''

"शुम्भ का उत्पात" वीर रौद्ररस एवं ओज प्रसाद माधुर्य गुण युक्त नारी चरित्र प्रधान कृति है। यह वह युग था जब देश में निखिल भारती कान्फ्रेंस (कलकत्ता) मुस्तफा कमाल पाशा के प्राण नाश के लिए रचे हुए षड्यंत्र का भण्डाफोड़ और स्त्रियों की गिरफ्तारी, मैसूर में लड़के-लड़कियों के लिए विवाह हेतु 14-18 वर्ष की उम्र का कानून पास हुआ, कलकत्ता में अखिल भारतीय गेरक्षिणी परिषद पंजाब के नेता लाला लाजपतराय की मृत्यु से हाहाकार, सांडर्स की हत्या, श्रीमती ऐनी बीसेन्ट की 32 वीं वर्ष गांइ की यत्र-तत्र सभाएँ, काकोरी काण्ड से जुड़े सेठ दामोदर स्वरूप के विरूद्ध मुकदमे की वापसी, बम्बई कारपोरेशन में वैश्यालय कमेटी की रिपोर्ट पर विचार तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी की ओर से श्रेष्ठ हिन्दी पुस्तक के लेखन अनुवाद हेतु 1000 का इनाम देने आदि कई घटनाएँ घटी। अतः नारी जागृति का संदेश पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र की कृतियों में अवश्य मिलेगा। उनकी नारी भारत माँ का प्रतीक है। अतः ग्रंथ का महत्त्व आज भी कम नहीं हुआ है। जबकि आज चहुँओर नारी शोषण की धूम है। यह कैसा भारत है ?

"जग में वह देश ऊँचा,
जिसने नारी का गान किया।
पर मिला खाक में लंका सा,
जिसने उसका अपमान किया।।
इसलिए यह देश सदियों से,
हो रहा रात-दिन भारत है।
अब तो बस नाम नाम ही है,
भारत अब नहीं वह भारत है।'

समस्याओं से जूझते तत्कालीन भारत की सुन्दर छवि धूमिल गौरव हीन होने का मात्र कारण जागृति संगठन की कमी थी। पूर्वजों का स्मरण कर नये युग का आवाहन में पं. ज्वाला प्रसाद का एक पवित्र संकल्प हुआ भक्ति गायन में –

"अरे ओ मेरे भारत देश कौन तेरा देश।
बिखरे है बतला दे कैसे तेरे सुन्दर केश।।
भूल गया तू क्यों निज गौरव,
अपना ज्ञान ध्यान बल वैभव,
भूल गया क्यों नर,
नागर का गीता का संदेश।।"

पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र कृत ग्रन्थ-परिचय

शिव गीता (वेदान्त: हिन्दी-टीका)
शिव महापुराण (हिन्दी-टीका : पुराण)
अद्भुत रामायण (हिन्दी-टीका भा. इतिहास ग्रन्थ)
पण्डित जवाला प्रसाद मिश्र का जीवन चरित्र (भाषा इतिहास ग्रन्थ)
संस्कृतारोहण (हिन्दी टीका व्याकरण ग्रन्थ)
वृहधवन जातक (ज्योतिष ग्रन्थ हिन्दी-टीका सहित)
लग्न जातक (ज्योतिष ग्रंथ : हिन्दी टीका सहित)
कामरत्न (योगेश्वर नित्यानन्द कृत : हिन्दी अनु. वैद्यक ग्रन्थ)
दशकुमार चरित्र (काव्य ग्रन्थ : हिन्दी अनुवाद महाकवि दण्डीकृत)
तुलसीकृत रामायण -(लवकुश काण्ड सहित हिन्दी टीका)
गणितचन्द्रोदय (बालकोपयोगी)
सहित (हिन्दी-टीका)

नोट : यह विवरण खेमराज श्रीकृष्ण दास, श्री वेंकटेश्वर प्रेस खेमराज कृष्ण दास मार्ग सातवीं खेतवाडी, खम्बाटा लेन बम्बई से प्रकाशित सूची पत्र जनवरी 1991 के अनुसार।

समकालीन नज़रिया
27 जनवरी, 1991 ई.

कथावाचक स्कूल के महान गायक

पं. राधेश्याम कथावाचक आधुनिकता के साथ-साथ पुरातन के भी पक्षधर थे। ग्रंथप्रकाशन हेतु उन्होंने राधेश्याम प्रेस स्थापित किया। प्रकाशन के पश्चात् उनके कथामंच एवं नाट्य मंच को नयी मंजिल मिली। सन् 1940 के आस-पास कथावाचक की रामायण, नाटक एवं भजन के रिकार्ड तैयार हुए। कथावाचक की रचनाओं पर एच.एम.वी., मेगाफोन, वीएलफोन एवं कोलम्बिया ग्रामोफोन कम्पनी ने रिकार्ड तैयार किये थे। ध्यान रहे इन रिकार्डों में स्वयं कथावाचक जी ने नहीं गाया है। इन्हें स्वर प्रदान किया है नारायण गोस्वामी, मिस दुलारी, रामकृष्ण चौबे, गिरजाशंकर चतुर्वेदी एवं मिस शान्ता एण्ड पार्टी ने। नाटकों में ड्रामा कम्पनियों के पात्रों के स्वर सम्वाद हैं इस तरह कथावाचक जी को बाहर का मंच मिला। रिकार्ड इसी उपलब्धि की एक कड़ी हैं। इससे कथावाचक जी की ख्याति रजबाड़ों, नवाबों तथा रईसों तक पहुँची। रचनाएँ नये फलक, शोहरत मिली। यह साधारण उपलब्धि नहीं थी। पं. राधेश्याम कथावाचक का इलैक्ट्रानिक्स युग में प्रवेश का भी यही समय है। रचनाओं को नये आयाम मिले एवं शोहरत मिली। इनके नाटकों का फिल्मांकन नहीं हो सका। कथावाचक जी अपनी किस्मत अजमाने बम्बई भी गये थे, लेकिन वे सफल नहीं हुए। इनके कई गीत पुरानी फिल्मों में अवश्य गाये गये हैं। मेरा नाटक काल में उन्होंने इस विषय पर विस्तार से लिखा है।

पं. राधेश्याम कथावाचक कृत रामायण का महत्व गायन की विशिष्ट शैली है। उनकी रामायण को अन्य लोगों ने भी गाया है। रामायण के रिकार्ड तैयार हुए। बरेली के तैलंग ब्राह्मण (दाऊजी मन्दिर किला निवासी) नारायण गोस्वामी ने रामायण को स्वर दिया। एच. एम. वी कम्पनी ने रामायण के रिकार्ड तैयार किए इसमें नारायण गोस्वामी ने गायन किया हैं। ये डॉ. कौशलनन्दन गोस्वामी के पूज्य बाबा जी थे। वे उच्चस्वर

में गायन करते थे जिस समय रामायण की रिकार्डिंग हो रही थी कलकत्ता में गाँधी आन्दोलन चरम पर था। भारत छोड़ो आन्दोलन के समर्थक गाँधीजी की जय बोलते थे। अंग्रेज पुलिस उन पर अत्याचार करती और गोली चलाती। गोली की आवाज उस भवन में सुनाई पड़ती जहाँ रिकार्डिंग हो रही थी। उनके बाबा कथावाचक कृत रामायण सस्वर उच्च स्वर में गाते थे। उनका स्वर कठोर मगर मधुर था। बार-बार अंग्रेज अफसर-पण्डित जी आप निम्न स्वर में गायें । उच्च स्वर में गाने से मेरी मशीन फट जायेगी। उनका स्वर बुलन्द था। इस आवाज के माध्यम से रामायण की ख्याति नेपाल, बर्मा, भूटान, तिब्बत, श्रीलंका, मलेशिया तथा भारत के नगर-नगर गाँव-गाँव तक पहुँची। कथावाचक-शैली को नया स्वर मिला।

एचएमवी कम्पनी नारायण गोस्वामी को एक बार रिकार्डिंग का सौ रूपया भुगतान करती थी। यह बड़ा पारिश्रमिक था। उनकी शेरवानी के बटन अशरफी के थे। वे जब तक कलकत्ता में रहते थे बरेली का ही पानी पीते थे। उनका पानी साथ जाता था। शायद इसका कारण था स्थान-स्थान का पानी गायक के कण्ठ को प्रभावित न करे। नारायण गोस्वामी का चित्र दाऊजी मंदिर में लगा हुआ है। यह न्योछावर रूप में यहाँ रखा गया है। नारायण गोस्वामी ने कथावाचक कृत रामायण के रामबनगामबन, हनुमान-संवाद केवट-राम संवाद, लक्ष्मण-मूर्छा, अंगद-संवाद आदि कथा खण्डों को गाया है। शेष का विवरण प्राप्त नहीं हो सका है।

महिला गायिका मिस दुलारी ने रामजन्म के केवल दो ही रिकार्ड गाये हैं जो मेरे संग्रह में हैं। कथावाचक जी का भजन 'जय जगदीश हरे, जय जगदीश हरे' काफी चर्चित हुआ था। गायिका मिस शान्ता एण्ड पार्टी ने इसे स्वर दिया था। जन ओ फोन कम्पनी ने। एक अन्य गीत गायिका गौरी बाला ने गाया था। ऐ ऐ श्यामसुन्दर......कहा मानों मोहे छेड़ो न' एचएमवी कम्पनी ने एफ टी सीरिज में रिकार्ड तैयार किया था। 'इस तन में रमा करना, उस तन में' गीत गाया था रामकृष्ण चौबे ने। गायक गिरजा

शंकर चतुर्वेदी ने 'शरण में आये हैं। गीत को स्वर दिया था। मेगाफोन कम्पनी बम्बई में इनका एक रिकार्ड तैयार किया था।

भिन्न-भिन्न गायकों ने राधेश्याम कथावाचक जी की कृतियों को गाकर अमर कर दिया हैं। इससे कथावाचक जी की शैली को लोकप्रियता एवं विस्तार मिला। बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि कथावाचक जी का नाटक काल जय शंकर प्रसाद से पूर्व का है लेकिन नाट्यशास्त्र में उनके नाटकों का पर्याप्त मूल्यांकन नहीं हुआ। इस दिशा में शोध की आवश्यकता है। कथावाचक जी के चर्चित नाटकों मे से वीर अभिमन्यु बेजोड़ है। कोलम्बिया रिकार्डिंग कम्पनी ने इस नाटक को आठ खण्डों में रिकार्ड किया था। ट्यून ग्रामोफोन कम्पनी ने शकुन्तला नाटक को तैयार किया था। इन रिकार्डों में ड्रामा कम्पनियों के कलाकारों की भागीदारी थी। शकुन्तला नाटक का केवल फ्लैप ही मेरे संग्रह में है। शकुन्तला नाटक के छह भागों की सूचना है।

कथावाचक जी के जो भी रिकार्ड मुझे मिला है वे एक क्रम में नहीं है। मोटे अनुमान के अनुसार विभिन्न कम्पनियों ने उनके लगभग पचास रिकार्ड तैयार किये थे। सबसे अधिक गायन नारायण गोस्वामी ने किया है। विशेष रूप में रामायण खण्डों का। यह बरेली के लिए महान उपलब्धि ही नहीं, यह इलैक्ट्रानिक्स मीडिया का इतिहास लिखा जाएगा उसकी शुरूआत नारायण गोस्वामी के रिकार्ड गायन से मानी जायेगी। महानगर को इस उपलब्धि पर गर्व है।

पं. राधेश्याम कथावाचक के विभिन्न कम्पनियों ने जो रिकार्डस तैयार किये थे, का संक्षिप्त विवरण-

रामायण - गायक नारायण गोस्वामी (बरेली)

रामबनगमन अयोध्याकाण्ड (भाग 2) नं. एफ्टी 838 वी एल ओ फोन कम्पनी बम्बई

हनुमान सम्बाद (भाग 1-2) नं. 10243 एच एम वी फोन कम्पनी दमदम कलकत्ता

बन-यात्रा (अयोध्या काण्ड) नं. 837 ट्यून ग्रामोफोन कम्पनी

हनुमान-राम-सम्बाद नं. 10244 एच एम वी कम्पनी कलकत्ता

केवट का राम के प्रति प्रेम (भाग 1-2) एच एम वी कम्पनी कलकत्ता

लक्ष्मण मूर्छा (भाग 1-2) नं. 348 एच एम वी कम्पनी कलकत्ता

अंगद-संवाद (तीसरा चौथा भाग) 9067 एच एम वी कम्पनी कलकत्ता।

रामायण (तर्ज राधेश्याम) गायिका मिस दुलारी (लखनऊ)

कथा रामजन्म (भाग-2) एच एम वी पी 9776 बी-3746 कलकत्ता

ड्रामा (वीर अभिमन्यु) कोलम्बिया ग्रामोफोन कम्पनी कलाकार ड्रामा पार्टी

भाग-1 जी.ई. 18039

भाग-2 जी.ई. 18040

भाग-3 जी.ई. 18048

भाग-4 जी.ई. 18042

भाग-5 जी.ई. 18041

भजन (गाना) ऐ-ऐ श्याम सुन्दर गायिका मिस गौरी बाला एवं कहा मानो मोहे छेड़ो न गायिका मिस गौरी वाला एचएमवी ग्रामोफोन कम्पनी कलकत्ता एफ टी 3552

जय जगदीश हरे, जय जगदीश हरे (गायिका मिस शान्ता एण्ड पार्टी)

नं. पी 661 जैन ओ फोना रिकार्ड कम्पनी बम्बई कलकत्ता

इस तन में रमा करना (गाना) रामकृष्ण चौबे एच एम वी 3810

शरण में आये है। (गायक गिरजाशंकर चतुर्वेदी ने एनसी) मेगा फोन कम्पनी।

केवल इन रिकार्डों को ही खोज सका हूँ। शेष की शोध यात्रा जारी है। यह रिकार्डस सन् 1935-47 तैयार किये गये हैं।

सन् 1960 के आस पास सोहराब मोदी ने झाँसी की रानी फिल्म बनाई थी। इस फिल्म के गीत पं. राधेश्याम कथावाचकच ने लिखे हैं। यह पहली इस्टमैन कलर फिल्म थी। सोहराब मोदी के निमन्त्रण पर ही कथावाचक जी बम्बई गये थे। इस क्षेत्र में उन्हें विशेष सफलता न मिलने के कारण वे पुन: बरेली आकर नाटक में सक्रिय हो गये। अभी हाल में योगेन्द्र शर्मा का उपन्यास प्रकाशित हुआ है– ''रुहेलखण्ड का गाँधी''। इसमें चुन्ना मियाँ के जीवन चरित्र को उकेरा गया है। लेखक ने यहाँ चुन्ना मियाँ और राधेश्याम कथावाचक को दो मुलाकातों का उल्लेख किया है– प्रथम मुंबई जाने से पूर्व की मुलाकात तथा जब वे मुंबई से बरेली वापस आए। इस मुलाकात का मूल स्रोत चुन्ना मियाँ के बेटे के वक्तव्य पर आधारित है।

(सम्वाद केसरी : 23 जनवरी, 2000)

'कथावाचक स्कूल' के प्रणेता पं. रामनारायण पाठक

बरेली से प्रकाशित 'भ्रमर' के सम्पादक पं. राम नारायण पाठक राधेश्याम प्रेस में मैनेजर थे। पं. राधेश्याम कथावाचक की कृतियों का प्रकाशन तथा उनकी देख-रेख का कार्य भी आप ही करते थे। अत: इस कारण लोगों में यह विश्वास एक लम्बे समय तक बना रहा कि पण्डित जी जिस रामायण का गायन तबले बाजे पर करके कथा कहते हैं, उसके लेखक पं. रामनारायण पाठक है। किन्तु ऐसा नहीं था। इस भ्रम का निवारण गत दिनों स्वतंत्रता सेनानी प्रताप चन्द्र आजाद अपने एक संस्मरण में भी कर चुके हैं। वस्तुत: रामनारायण पाठक पण्डित जी के व्यक्तित्व-कृतित्व से इतनें प्रभावित थे कि उन्होंने रामायण की तर्ज पर 'श्रीमद् भगवदगीता' की रचना कर एक लम्बे समय तक जनमानस को पवित्र संकलप से बाँधे रखा। 'अहिरावण वध', 'श्री सत्य नारायण कथा' तथा 'प्रह्लाद चरित्र' आदि कृतियो का सृजन आपने कथावाचक शैली में करके 'राधेश्याम स्कूल' की परम्परा को पुष्ट किया। 'भ्रमर पत्रिका का लगभग एक दशक तक सम्पादन कर हिन्दी पत्रकारिता को नये आयाम दिए।[1]

मेरे पिताजी जीवन भर परिश्रम एवं स्वाध्याय में लगे रहे, प्रचार-प्रसार की राजनीति से दूर। राधेश्याम प्रेस को उन्होंने अपने खून से सींचा। कथावाचक जी ने उनके प्रयास साधनों का भरपूर लाभ उठाया और उनकी प्रतिभा को नेपथ्य में डाल दिया। लेकिन सरल स्वभाव के स्वार्थ रहित व्यक्ति के रूप में निरन्तर कथावाचक जी की रचनाओं को संवारते रहे। सत्य तो यह है कि कथावाचक जी की रामायण में भी पाठक जी का योगदान रहा है। भले ही इसे कोई स्वीकार करे या न करे क्योंकि अब न तो पाठकजी हैं और कथावाचक जी। वे हिन्दी, उर्दू, संस्कृत, गुजराती तथा बंगला के अच्छे विद्वान थे। उनका निधन 14 अक्टूबर 1976 ई. को

बिल्सी (बदायूं) में मेरे पास हुआ। जीवन के अंतिम दस वर्ष तक वे मेरे पास ही रहे। ये शब्द हैं डॉ. सरोजनी पाठक के। आप पं. राम नारायण पाठक की पुत्री हैं और आर्य कन्या इन्टर कॉलेज की प्राचार्य हैं एक पत्र में उन्होंने यह बात कही है।

वस्तुत: हम कथावाचक स्कूल के अंतिम स्तम्भ पं. राम नारायण पाठक की साहित्यिक उपलब्धियों को भूल गये हैं। मनीषियों की अस्थियों का व्यापार करने वाले अपने दायित्व से मुख मोड़ चुके हैं। अत: इस कर्मयोगी की जन्मशती पर कोई आयोजन नहीं हुआ। पाठक जी का जन्म 30 मई 1894 को चंदौसी (मुरादाबाद) में हुआ था। नया टोला (आलमगीरगंज) निवासी पाठक जी राधेश्याम प्रेस के एक निष्ठावान सिपाही थे। मैनेजर पद पर कार्य करते हुए उन्होंने एक दशक तक 'भ्रमर' (मासिक) का सम्पादन किया। साहित्यिक जागरूकता और अपने प्रकाशनों के प्रचार-प्रसार हेतु कथावाचक जी ने भ्रमर मासिक पत्र का प्रकाशन सन् 1922 शुरू किया जो प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित होता था। वार्षिक मूल्य था- एक रुपया।

यह यशोधरा पत्रिका थी जिसे पाँच महत्त्वपूर्ण सम्पादक मिले। पं. राधेश्याम कथावाचक, पं. गोपी वल्लभ शास्त्री, प्रवासी लाल वर्मा उदय शंकर भट्ट एवं पं. राम नारायण पाठक। सन् 1923 से 30 तक भ्रमर का सम्पादन पं. राम नारायण पाठक ने किया। चंदौसी के सुरेन्द्र मोहन मिश्र के पास 1927-28 की फाईलों में भ्रमर सुरक्षित हैं। मेरे संग्रह में भ्रमर की सन् 1928 (जनवरी, सितम्बर, अक्टूबर तथा दिसम्बर माह) तथा सन् 1929 के फरवरी एवं मार्च अंक सुरक्षित हैं। काशी से जब प्रेमचन्द ने हंस मासिक (मार्च 1930) का श्री गणेश किया तो उन्होंने प्रथमांक में भ्रमर के महत्त्व को स्वीकार किया है "हमारे अथक प्रयास के अलावा इस ग्राहक वृद्धि का एक बहुत बड़ा कारण यह है कि बरेली से प्रकाशित 'भ्रमर' के ग्राहक भी हमें मिल गये हैं।" भ्रमर की पच्चीस हजार प्रतियाँ प्रकाशित होती थीं।

'मुसाफिर की डायरी' संयुक्त सम्पादन का नमूना है जिसे कथावाचक जी एवं पाठक ने साथ-साथ किया था। इसमें लगभग अस्सी हजार महत्त्वपूर्ण नाम पते मुद्रित थे। इसी क्रम में 'प्रेतलोक', 'दृष्टान्त', 'महासागर', अजायबघर का सम्पादन भी उन्होंने किया था। सन् 1962 में प्रकाशित भारतीय एकता (मासिक) पाँच अंकों के पश्चात् बन्द हो गया। पं. राम नारायण पाठक के कृतित्व-व्यक्तित्व पर श्री शिव मंगल सिंह 'सुमन' ने अपने ग्रंथ दिवंगत हिन्दी सेवा (भाग एक) में विस्तार से चर्चा की है। उनकी महत्त्वपूर्ण कृति 'प्रेतलोक' उपलब्ध नहीं है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सूची पत्र में तो इसका उल्लेख है, लेकिन मूल प्रति वहाँ खोजने पर भी नहीं मिली। वस्तुत: पाठक जी ने भ्रमर का प्रकाशन कर पत्रकारिता को राष्ट्रीयता, भक्ति, चरित्र एवं बौद्धिकता से जोड़ने का प्रयास किया उनकी पत्रकारिता का आधार गीता का कर्मयोग है। पाठक जी कथावाचक स्कूल के अंमिकम कवि, लेखक सम्पादक एवं भक्त हैं।

'भ्रमर' के माध्यम से की गयी साहित्यिक सेवाओं के लिए रुहेलखण्ड पं. रामनारायण पाठक का ऋणी रहेगा। सन् 1922-24 में गाँधी आन्दोलन समाप्त हो गया था। यह युग आन्दोलन का कम विचारों के प्रचार का अधिक था। सन् 1922 में बरेली से प्रकाशित 'भ्रमर' का प्रकाशन पं. राधेश्याम प्रेस से हुआ। अपने समय की यह यशोधन पत्रिका थी, जिसका 1923 से 1930 पर्यन्त सम्पादन पं. रामनारायण पाठक ने किया। इनके द्वारा सम्पादित 'भ्रमर' के जनवरी, सितम्बर, अक्टूबर तथा दिसम्बर 1928 सहित फरवरी-मार्च 1929 के अंक मेरे पास सुरक्षित हैं। अंको को देखकर पत्रिका के तेवर का पता लगता है।

"अलीगढ़ से निकलने वाले इस्लामी अखबार 'अलीगढ़ मेल' की नीति कुबुद्धि का बड़ा जर्बदस्त उदाहरण है। यह वही अखबार है जिसके विषय में कुछ हुए मौलाना मुहम्मद अली ने कहा था कि यह सरकारी रुपये की सहायता से निकलता है।.... उन्होंने स्वदेश और स्वधर्म की भावना से प्रेरित होकर अपने धर्म की परम्परा से चली आती हुई

प्रथाओं में कुछ उपयोगी हेर फेर किए जाने की बात का समर्थन किया था जो हिन्दुओं में ही नहीं मुसलमानों में भी एक ऐसा तबका है जो परम्परा से चली आ रही रीतियों में सामयिक परिवर्तन होना अधर्म मानता है। मुसलमानों का अखबार 'अलीगढ़ मेल' और 'हिन्दी बंगवासी' दोनों क्रमश: मुसलमान और हिन्दुओं के अपरिवर्तनवादी दल के प्रतिनिधि होकर देश का और राष्ट्र का अनर्थ कर रहे हैं'' ('भ्रमर' 1929 जनवरी पृष्ठ 197)

पंडित रामनारायण पाठक ने दो हिन्दी-भक्तों का स्वर्गवास; संस्कृतोन्नति हेतु दान; चोर-डाकू; बाबुओं की प्रसन्नता; खांड पर बरेली विपत्ति; भय; विवेक भ्रष्ट; कलंक की बात तथा अकृतज्ञता शीर्षक से 'भ्रमर' में सम्पादकीय टिप्पणियाँ अंकित की हैं। इसमें आपकी सम्पादकीय शैली का चमत्कार भी है और विवेक भी। दिसम्बर 1928 के सम्पादकीय में आपने प्रयाग से प्रकाशित 'भारतेन्दु' (मासिक) में प्रकाशित 'कथावाचक की कर्तूत' के अन्तर्गत पण्डित जी के नाटकों के पबति ओछे विचार रखने वालों की आपने अच्छी खबर ली है।

पण्डित रामनारायण पाठक ने 'श्रीमद् भगवद्गीता' की रचना, कथावाचक शैली पर रचित रामायण से प्रेरणा ग्रहण करके की। 1928 में प्रकाशित एक विज्ञापन– ''जिस तरह आप अब तक पं. राधेश्याम जी की रामायण बाजे और तबले पर सुनते आयें हैं अब गीता भी कहिए और सुनिये। इसको पढ़कर भक्ति-ज्ञान के पवित्र भाव हृदय में उत्पन्न होंगे चित्त आनन्द सागर में हिलोरे लेने लगेगा। यही आनन्द रूपी गीता छ: भागों में समाप्त हुई है– अर्जुन मोह; आत्मा की अमरता; विराट रूपदर्शन कर्मयोग; जीव-ब्रह्म विवेक तथा अर्जुन का समाधान/राधेश्याम पुस्तकालय, बरेली।''

उनकी एक अन्य रचना ''अहिरावणवध'' में रामायण की दूसरी क्षेपक कथा है। इसमें रावण के पाताल निवासी पुत्र अहिरावण का राक्षसी माया से राम-लक्ष्मण को चुरा ले जाने तथा हनुमान का उसे मार कर उन्हें

छुड़ा लाने की घटना का अद्भुत वर्णन है। राम की सौम्यता लक्ष्मण की तेजस्विता और महावीर का कथन काव्य की विशेषता है। स्थान-स्थान पर गीत चुटीली भाषा में हैं। 1928 में इसका मूल्य था- 75 पैसा; कवि रामनारायण पाठक।

सर्वप्रथम संभवतया रुहेलखण्ड में 'सत्यनारायण की कथा' रामनारायण पाठक ने भजन-कीर्तन शैली में प्रस्तुत कर जन-जन की भावना तो जोड़ा, संगीत की तर्ज पर इस कथा का। मूल्य था 25 पैसा। यह संस्कृत कथा का रूपान्तर है।

'प्रह्लाद चरित्र' की रचना पाठक जी ने 1927 में की। पं. राधेश्याम द्वारा रचित भक्त प्रह्लाद की तर्ज पर उन्होंने इस कृति की रचना कर अपनी अलग पहचान बनाने की कोशिश की थी। इस बात का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इस ग्रन्थ की पाँच-सौ प्रतियाँ 1928 के हरिद्वार कुम्भ में हाथों-हाथ बिक गयीं। मूल्य था- एक रुपया। ये प्रतियाँ कथा वाचक जी अपने साथ ले गये थे।

वस्तुतः पण्डित रामनारायण पाठक कथावाचक जी की परम्परा के कवि-लेखक सम्पादक तथा भक्त थे। उन्होंने अपने चिन्तन द्वारा 'राधेश्याम स्कूल' की काव्य प्रवृत्तियों को राम भक्ति के साथ-साथ कृष्ण भक्ति के स्वरों से परिचय कराया। 'भ्रमर' उनकी सम्पादकीय शैली का ऋणी रहेगा। भ्रमर प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित होती थी और वार्षिक मूल्य था - एक रुपया। श्री सुरेन्द्र मोहन के पास 1927 से 28 तक की प्रतियाँ सुरक्षित हैं। इसके मुख्य पृष्ठ पर राधा-कृष्ण का तिरंगा चित्र भ्रमर के साथ प्रकाशित होता था। प्रेमचन्द ने 'हंस' पत्रिका के प्रवेशांक में 'भ्रमर' पत्रिका का उल्लेख किया है। इससे 'भ्रमर' का वर्ष 1930 तक जीवित रहने तथा उसकी प्रतिष्ठा का पता भी लगता है। विविध-विभूषित-सचित्र मासिक पत्र में निम्न पंक्तियां प्रकाशित होती थीं–

''विश्व वाटिका में विचरण कर पीना पुष्पों का मकरन्द।
लेकिन 'भ्रमर' भूल मत जाना प्रभु-पद-पंकज का आनंद।।

सच्चे सुख का धाम यही है, वह टहला हो निस्पन्द।
राधा-माधव की गुण गाथा, गुन-गुन कर गाना स्वच्छन्द॥''

'भ्रमर' का प्रकाशन रुहेलखण्ड में पत्रकारिता इतिहास को राष्ट्रीयता-भक्ति-चरित्र तथा बौद्धिकता से जोड़ने में एक सही कदम था। इन प्रयासों के लिए पं. रामनारायण पाठक के योगदान को नहीं भुलाया जा सकता।

संक्षिप्त परिचय :-

श्री (स्व.) राम नारायण पाठक: -

रामनारायण पाठक की पत्नी श्रीमती सोमवती पाठक जन्म अप्रैल 1894 ई. चंदौसी (मुरादाबाद) मृत्यु 14 अक्टूबर 1976 ई. बिल्सी (बदायूँ) में।

रचनाएँ–

अहिरावण वध; प्रेतलोक; सत्यनारायण की कथा; प्रहलाद चरित्र; अर्जुन मोह; आत्मा की अमरता; कर्मयोग; विराट स्वरूप दर्शन; जीव ब्रह्म विवेक; अर्जुन का समाधान।

संकलित एवं सम्पादित –

दृष्टान्त महासागर; अजायबघर तथा भारतीय एकता (मासिक 1962 ई. प्रकाशन)

दैनिक श्री वेंकटेश्वर समाचार पत्र में सहायक सम्पादक सन् 1917 ई. तक

परिवार–

पुत्र-श्रीश्याम सुन्दर पाठक; राम सुन्दर पाठक; विजय सुन्दर पाठक (दैनिक जागरण आगरा) पुत्रियाँ – श्रीमती शकुन्तलता (फैजाबाद विधवा); मनोरमा शर्मा; मालती पाठक (दिल्ली) तथा सरोजनी पाठक (प्राचार्या: आर्यकन्या इण्टर कॉलेज बिल्सी (बदायूँ)।

संगम (मासिक पत्रिका)
अक्टूबर 1991 ई.

पत्रों में कथावाचक जी का मर्म

काशी प्रवास के दौरान मेरा सम्पर्क चंदौसी के सुरेन्द्र मोहन एवं रामनारायण पाठक की पुत्री सरोजिनी पाठक (बिल्सी, बदायूँ) से हुआ। इनके पत्रों में राधेश्याम कथावाचक एवं उनके स्कूल से जुड़े पत्रों की कड़ी में जीवन का राग समझने का अवसर मिलेगा। ध्यान रहे पं. रामनारायण पाठक ने दैनिक वेंकटेश्वर समाचार पत्र में सहायक सम्पादक पद पर सन् 1917 ई. तक कार्य किया। आपने प्रहलाद चरित अर्जुन मोह; आत्मा की अमरता; कर्मयोग; जीवन ब्रह्मं विवेक, अर्जुन का समाधान आदि कृतियों का सृजन किया। सम्पादित ग्रंथों में दृष्टान्त महासागर, अजायबघर तथा भारतीय एकता मासिक का सन् 1961 ई. में प्रकाशन। पाठक जी की पुत्री सरोजिनी पाठक में अपने पत्रों में द्विजेन्द्रलाल राय के उपन्यासों का हिन्दी अनुवाद का उल्लेख किया है, जब मैंने द्विजेन्द लाल राय के उपन्यास 'नदी के पार' को पढ़ा तब पता लगा इसका अनुवाद रामनारायण पाठक ने नहीं किया है। पाठक जी बंगला नहीं जानते थे। नाम-रूपता के कारण उन्होंने अपने पिता को द्विजेन्द्र लाल राय के नाटकों से जोड़ा है। इसका उल्लेख उन्हें लिखे एक पत्र में कर चुका हूँ।

पं. सुरेन्द्र मोहन मिश्र लम्बे समय तक काव्य मंच से जुड़े रहे। रुहेलखण्ड के इतिहास-पुरातत्त्व, पाण्डुलिपियों पर आपने खोजपूर्ण कार्य किया है। ऐसी झलक उनके पत्रों में मिलती है। मैंने सुरेन्द्र मोहन मिश्र पर एक संस्मरण लिखा था। उसे मूल में एक पत्रिका में भेजा था प्रकाशित हुआ। लेकिन प्रति न मिलने के कारण वह प्रकाश में नहीं आ पाया। प्रत्यय-परोक्ष रूप से जुड़े कथावाचक स्कूल के इन शुभ चिंतकों और आलोचकों की लम्बी कतार है। यहाँ पांडेय बेचन शर्मा को लिखा कथावाचक का पत्र अविकल दिया जा रहा है।

विख्यात हिंदी साहित्यकार पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' के नाम पं. राधेश्याम कथावाचक का एक पत्र–

काव्य-कला-भूषण
पं. राधेश्याम कथावाचक

राधेश्याम भवन, बरेली
14/10/1927

प्रिय उग्र जी, वन्दे !

मैं गत सोमवार को बरेली आ रहा हूँ। कह नहीं सकता कि फिर कब तक कंपनी में (कांशी या दूसरे स्थान पर) जाऊँ। एक विचार यह भी है कि धनतेरस पर कंपनी में पहुँचकर नाटक के पार्ट बाँट दूँ, पर अभी यह निश्चित नहीं। मैंने 'आज' में आपकी आलोचना देखी। देखकर दुःख इतना ही हुआ कि आप जब लिखने बैठे थे तो आपका टेस्ट अच्छा नहीं था। मैं कब कहता हूँ कि मेरी कृति में दोष नहीं है, पर गुण भी तो आप चाहते तो उसमें से ढूँढ लेते। गुण और दोष दोनों बताना आपका कर्त्तव्य था और है। मैंने तो 12-14 वर्ष से, भली या बुरी हिंदी की सेवा ही इन पारसी मंचों पर की है और अभी करूंगा भी। पथ प्रदर्शक यदि अच्छे मिले तो मैं समझता हूँ कि जितना परिवर्तन मैंने इस स्टेज का किया है अभी उससे ज्यादा कर सकूँगा। धीरे-धीरे धीरिया-धीरे सब कुछ होय।

अपनी प्रकृति और अपनी बनारस के कारण आप यदि एक रूखी लेखन ही चलाना पसन्द करें तो आपकी इच्छा। मैं आपको रोक तो सकता नहीं। और यह भी याद रखिए कि जवाब भी नहीं दूँगा, पर हाँ इस नीति से आप अपना सुधार नहीं कर सकेंगे जितना मुझे सलाह देकर और स्टेज के भीतर घुसकर। मुझे तो तुम गुरुवार के बाद मिले ही नहीं, नहीं तो अपने साथ तुम्हें बरेली लाकर छोड़ा होता। क्यों, क्या एक कन्सेशन टिकट यहाँ का भी कटा सकते हो ? पुसतकों के सम्बन्ध की बात तो उस दिन. अधूरी ही रह गई थी। उत्तर आज ही देना।

–राधेश्याम कथावाचक

('फाइल और प्रोफाइल' पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', भूमिका प्रकाशन, नई दिल्ली से साभार)

सुरेन्द्र मोहन मिश्र,

बी-208, पुजारी अपाटमेंटस,
शिवविहार रोहतक रोड़ नांगलोई,
नई दिल्ली- 110041
22.3.90

आदरणीय शर्मा जी,

नमस्कार।

आपका पत्र और साथ में भ्रमर पर लेख पाकर मन प्रसन्न हो गया। आपने बरेली की इस पत्रिका को नये सिरे से विद्वानों के बीच चर्चित किया। यह बहुत ही अच्छा लगा। इससे पूर्व बरेली की हिन्दी पत्रकारिता शीर्षक लेख से अमर उजाला में चर्चा कर चुका हूँ। मेरे पास भ्रमर की सन् 1922 और 1927-28 की दो वर्षो की प्रतियाँ हैं। भ्रमर कब तक चला इसकी सूचना मेरे पास नहीं है। वैसे पंडित राधेश्याम कथावाचक के निजी संग्रहित ग्रंथ मेरे संग्रह में आ गये हैं। एक आश्चर्य यह है कि भ्रमर की नवम्बर 1927 से लेकर अक्टूबर 1928 तक कवर पेज पर राधा कृष्ण का एक भ्रमर के साथ तिरंगा चित्र छपता रहा। पर फरवरी 1929 का अंक देखकर आश्चर्य हुआ वो बिल्कुल उतना ही सादा है जितना अक्टूबर 1922 से लेकर अक्टूबर 1923 के बारह अंको में था। आपके पास उपलब्ध भ्रमर के अंक देखने की इच्छा बहुत बलवती हो चुकी है। अपने लेख में आपने मेरी चर्चा करके अपने सहज स्नेह का परिचय दिया है।

संक्षेप में अपना भी परिचय दे दूँ। मैं उत्तर प्रदेश की चंदौसी नगरी का वासी हूँ और वहाँ मिट्टी की ऐतिहासिक प्राचनी कलाकृतियों कस स्वसंग्रहित संग्रहालय चलाता हूँ। हिन्दी और संस्कृत के प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथो का अच्छा संग्रह है मेरे पास। सन् 1913 से लेकर 40 के मध्य की मासिक पत्रिकाओं की फाइलों का भी अच्छा संग्रह है। रुहेलखंड की पुरानी हिन्दी पत्रकारिता और भूले-बिसरे अज्ञात कवि लेखकों की खोज मेरा प्रिय विषय है। आपके इस लेख से मुझे अच्छी जानकारियाँ मिली। आप किन-किन पत्रों मे छपते हैं। आपके खोजपूर्ण लेख पढ़ने की इच्छा है। आपसे

पत्राचार करके मेरा ज्ञानवर्धन ही होगा। पत्रोत्तर देने में बहुत आलसी हूँ जैसा कि आपको इस बार अनुभव हो ही गया होगा। इसे अन्यथा न लें। पत्र दें। कृपा होगी।

स्नेही

सुरेन्द्र मोहन मिश्र

नोट : गत दिनों पं. सुरेन्द्र मोहन मिश्र का दिल्ली में निधन की सूचना अमर उलाजा में पढ़ी थी। उन्हें मेरा नमन् !

बिल्सी

3.7.91

महोदय,

आपका पत्र मिला। तदर्थ धन्यवाद, मेरे पूज्य पिताजी द्वारा रचित एवं सम्पादित कोई भी पुस्तक मेरे पास उपलब्ध नहीं है। एक सेट जो मैं स्वयं राधेश्याम प्रेस बरेली से लायी थी- मेरे विभागीय अधिकारी ने माँग ली- यदि आपको पुस्तक प्राप्त करनी हो तो सीधे राधेश्याम प्रेस बरेली से सम्पर्क करें।

पिताजी का जीवन परिचय एवं उनकी साहित्यिक सेवाओं के विषय में 'दिवंगत हिन्दी सेवी' के भाग एक में विस्तृत जानकारी है वैसी भी अमर उजाला, विश्व मानव इत्यादि में समय-समय पर उनके विषय में लिखा जाता रहा है।

उनके द्वारा रचित ग्रन्थ

अहिरावण वध, प्रेतलोक, सत्यनारायण की कथा, प्रह्लाद चरित्र, अर्जुन मोह, आत्मा की अमरता, कर्मयोग, विविध रूपदर्शी जीव ब्रह्मविवेक, अर्जुन का समाधान इत्यादि।

संकलित एवं सम्पादित

दृष्टान्त महासागर, अजायबघर, तथा भारतीय एकता नामक मासिक पत्र का 1962 में सम्पादन।

अनुदित

द्विजेन्द्र लाल राय के बंगला नाटक का अनुवाद गुजराती से 'अटल दुग्ध

चिकित्सा' का अनुवाद पिताजी ने अपने जीवन काल कर्म में अपनी किसी कृति का उल्लेख नहीं किया, ये तो बाद में मालूम हुआ।

सधन्यवाद

बिल्सी

6.7.91

महोदय,

आपके पहले पत्र का उत्तर मैं दे चुकी हूँ। दूसरे पत्र के साथ पूज्य पिताजी के विषय में आपकी लेख भी मैंने पढ़ा। मेरे पिताजी जीवन पर परिश्रम एवं स्वाध्याय में लगे रहे। प्रचार एवं प्रसार की राजनीति से दूर राधेश्याम प्रेस को अपने खून से सींचते रहे, कथावाचक जी ने प्रयास साधनों का भरपूर लाभ उठाया और पिताजी की प्रतिमा को नेपथ्य में डाल दिया; लेकिन सरल स्वभाव के स्वार्थ रहित व्यक्ति के रूप में निरन्तर कथावाचक जी की रचनाओं को संवारते निखारते रहे। आपकी यह मानना कि मेरे पिता कथावाचक जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से इस कदर प्रभावित रहे कि उन्होंने उनकी शैली में श्रीमद्भागवतनीति की रचना भी उसी शैली में की। सत्य तो यह है कि कथावाचक जी रामायण में भी पाठक जी का विशेष योगदान है, भले ही उसे अब कोई स्वीकार न करे क्योंकि अब न तो पाठक जी है और न कथावाचक जी। पाठक जी हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी के अच्छे विद्वान थे। इनके अतिरिक्त बंगला, गुजराती एवं मराठी के भी अच्छे ज्ञाता थे।

आपने उनके विषय में पूछा है जाकर मालूम करा की तब आपको लिख रही हूँ उनका जन्म चंदौसी जि. मुरादाबाद में अप्रैल 1894 में हुआ और स्वर्गवास 14 अक्टूबर 1976 को बिल्सी (बदायूँ) में मेरे पास हुआ जीवन के अंतिम 10 वर्ष वे मेरे ही पास रहे।

एक काम आपके माध्यम से हो सके तो अच्छा है। पाठक जी की पुस्तक 'प्रेतलोक' जो अब उपलब्ध नहीं है उसकी प्रति बरेली कॉलेज से प्राप्त की थी मेरी मण्डलीय बालिका विद्यालय निवेशिका महोदया, मेरे निवास पा आई और उनके साथ साहित्य तथा व पुस्तक भी लेगईं यदि

काशी नागरी प्रचारिणी में वह पुस्तक उपलब्ध हो तो मुझे लिखे मैं स्वयं आपके पास आकर उसी दूसरी प्रति की व्यवस्था फोटो स्टेट द्वारा करूंगी।

सधन्यवाद

बिल्सी

5.9.91

महोदय,

मैं प्रवास से लौटी तो आपकी पत्र मिला। तदर्थ धन्यवाद, मैं 8 जुलाई को बरेली गिरीश से मिली थीं, उस समय उसने मुझसे कहा था कि मैं शीघ्र ही पुस्तकें और सूची पत्र आपको उपलब्ध करा दूँगा, परन्तु एक माह बीतने पर भी उसने कुछ नहीं किया। तदुपरान्त मैंने उसे एक कड़ा रजिस्टर्ड पत्र लिखा जिसका उसने बहुत ही अपना बचाव करते हुए पत्र लिखा.... मैंने पुस्तक उससे वी.पी. द्वारा भेजन को लिखा था, वह पत्र यहाँ 26.8 को मिला है उसके अनुसार तो अब तक कोई उत्तर मिलनी चाहिए- नहीं तो मैं स्वयं बरेली जाऊँगी। मैने जैसा आपको लिखा था कि मेरे पिता का इस परिवार ने बहुत शोषण किया, वह एकदम सही है। इतने बड़े प्रेस की स्थापना करना और चलाना कथावाचक जी के बस की बात नहीं थी, पिताजी ने जो कुछ लिखा उससे कोई आर्थिक लाभ कथावाचक जी ने अपने जीवन काल में नहीं लिया। बस वे केवल मेरे पिता को छोटे भाई की तरह सार्वजनिक स्थानों पर कहने को नाटक खूब करते थे, उनके छोटे भाई थे मदन मोहन की उन्होंने सब तरह से देभाल की और उनकी मृत्यु के पश्चात् तो गिरीश के पिता ने तो मेरे पिता को बहुत उपेक्षित किया जिसके कारण उन्हें जबरदस्त ब्रेकडाउन हुआ- पुस्तकें प्राप्त होने पर अपने स्तर से मैं भी लोगों को लिखूँगी। कथावाचक जी के एक सम्बन्धी श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र भी है जो बराबर लिखते रहते हैं। पं.क्षेमचन्द्र सुमन को भी लिखूँगी।

आप जिस प्रकार का सहायोग मुझसे चाहेंगे मैं देने को तैयार हूँ।

सद्भावनाओं सहित

सरोजिनी पाठक

कथावाचक की पहचान खतरे में

पं. राधेश्याम कथावाचक ने लगभग पचास ग्रंथों का सृजन व सम्पादन किया है। रामायण की कथावाचक शैली को उन्होंने नए आयाम दिए है। राधेश्याम कीर्तन की भूमिका में उन्होंने लिखा है– 'मुझे बाल्यावस्था से ही मेरे पूज्य पिता (श्री बाँकेलाल) ने गायन, हारमोनियम और कथा का अभ्यास कराया था। मुझे खूब याद है मैंने नौ वर्ष की अवस्था में तुलसीदास की कथाबांची थी।.... तुकबन्दी का शौक लगा..... समय ने मुझे रामचरित मानस को छन्द (गाना) में बनाना प्रारम्भ किया। श्रोताओं को यह रामायण रूचिकर लगी।'

पं. राधेश्याम कथावाचक की रामायण मानस के प्रचार-प्रसार में सहायक ही हुई। सन् 1910 तक वह कथा बाँचने का श्री गणेश कर चुके थे। इसी समय इनकी रामायण इंडियन प्रेस, प्रयाग से प्रकाशित हो चुकी थी। पंडित जी ने रामकथा को खड़ी बोली में लिख कर हिन्दी की महान सेवा की है। नेपाल नरेश के दरबार में कथा वाचस्पति के सम्मान से अलंकृत होने पर उन्होंने कहा था – 'वाल्मीकि तुलसी भयो, तुलसी राधेश्याम।'

सन् 1916 में उनकी रामायण का प्रकाशन प्रयाग के अलावा आगरा, मुरादाबाद, हाथरस आदि स्थानों से भी हुआ था। सन् 1916 एवं 1917 की कई प्रतियाँ मेरे पास सुरक्षित हैं। मुरादाबाद की लक्ष्मीनारायण प्रेस में प्रकाशित कथा खण्ड- किष्किन्धा काण्ड, विभीषण की शरणागति के मुद्रक- कैलाश नाथ शर्मा एवं विश्वनाथ शर्मा है। तृतीयावृति की इन कथाखंडो का मूल्य था तीन आना।

पं. राधेश्याम कृत रामायण के कथा खण्ड सन् 1917 में आगरा के गोस्वामी प्रिन्टर्स, प्रो. ब्रजनाथ शर्मा, कॉरनेशन प्रेस, शीतल स्ट्रीट से प्रकाशित हुए। द्वितीयावार में प्रकाशित कथा खण्ड अयोध्याकांड दशरथ का प्रतिज्ञा पालन चार हजार की संख्या में प्रकाशित होने की सूचना है। मूल्य

था तीन आना। परशुराम संवाद (श्रावणी संवत् 1962), बाल काण्ड (अगहन सं. 1971) तथा अशोक वाटिका, सुन्दरकाण्ड कथाखण्ड में तिथि (आश्विनी 1965 संवत्) रचनाकाल की प्रमाणित तिथियाँ हैं।

इनका प्रसंगो से मूल कथा शैली का एक उदाहरण

सग्रीव ने हनुमान से कहा–

'हे हनुमान ! देखो तो सही,
दो पुरुष इधर को आते हैं।
दोनों वनवासी योगीराज,
या राजसिंह दिखलाते है।'
हनुमान राज से पूछते हैं–
'खौफ़नाक है यह जगह,
दुस्तर और गंभीर।
महाराज तुम कौन हो,
श्यामल गौर शरीर।'

इंडियन प्रेस प्रयाग से प्रकाशित संस्करण में पुस्तक रचयिता पं. राधेश्याम कथावाचक का श्याम श्वते चित्र हारमोनियम पर कथा बाँचती मुद्रा में प्रकाशित हुआ। एक अन्य चित्र मालवीय जी की वेशभूषा में मुरादाबाद के संस्करण में प्रकाशित हुआ।

सन् 1922 में कथावाचक जी ने अपने ग्रंथों की लोकप्रियता को देखते हुए राधेश्याम पुस्तकालय प्रेस की स्थापना अपने निवास अपने निवास स्थान बिहारीपुर बरेली में की। देशाटन-कथा वाचन के क्रम में कथावाचक जी के प्रेस का कार्य पं. घनश्याम शर्मा एवं पं. रामनारायण पाठक देखने लगे थे। सन् 1936 में ग्रंथो पर उनक हस्ताक्षर एवं चित्र मुद्रित होने लगा था। सन् 1923 एवं 1936 के संस्करण मेरे पास सुरक्षित हैं। इस काल के कथा खंडो में रचनाकाल, कथावाचक जी का अन्त में लिखा जाने वाला नाम तथा संवाद संकेतो को समाप्त कर दिया गया है। सन् 1916 से सन् 1982 के संस्करणों में पर्याप्त भेद है। राम का प्रतिज्ञा

पालन कथा खण्ड में–

'जिस दिन से भाइन सहित आये राम विवाह।
तब से नित नूतन रहा अवध मोदे उत्साह।'
(पृष्ठ 1, अयोध्या काण्ड सन् 1916)
'जब से भ्राताओं सहित, प्रभु का हुआ विवाह !
तब से छाया अवध में नया चाव उत्साह॥
राजेश्वर सम्राट है, दशरथ पृथ्वीपाल।
प्रजा सुाी धन धान्य से सब प्रकार खुशहाल।''

(वही संस्करण सन् 1936)

'जानकीपुर में राम का जब से हुआ विवाह।
छाया तब से अवध में नया चाव उत्साह॥
दशरथ, सा था शीश पर, चक्रर्वी महिपाल।
प्रजावर्ग था इसी से सब विधि मालामाल॥'

(वही, संस्करण सन् 1982)

इसी प्रकार 'राम सुग्रीव मित्रता' कथा खण्ड में अनेक परिवर्नन हैं। कथा प्रसंग में–

'हनुमान पहुँचे वहाँ ब्राह्मण रूप बनाए।
तेजस्वी मुख देखकर बोले माथ नवाय॥

(पृष्ठ 1, संस्करण 1916 ई.)

'विप्ररूप धर कर वहाँ पहुँचे पवन कुमार।
चौकस था इस काम को ब्राह्मण का आकार॥'

(पृष्ठ वही संस्करण 1982 ई.)

सन् 1916 के संस्करण में यह पंक्तियाँ नहीं हैं–

'किन्तु वास्तव में न थे ब्राह्मण श्री बजरंग।
प्रभु के सामने हो गया अभिनय सारा भंग॥
रक्षा ब्राह्मण वेष की कर न सके कपिनाथ।
भूले अपने आप को कहा नवाकर माथ॥''

(संस्करण 1982 ई. पृष्ठ वही)

उक्त संस्करण में तारा उपदेश के पश्चात सुग्रीव राज तिलक की कथा है। पं. राधेश्याम कथावाचक ने यह कथा विजयदशमी संवत् 1971 में लिखी थी।

आजादी के पश्चात तक कथावाचक जी की रामायण हिन्दी एवं उर्दू में प्रकाशित होती थी। उर्दू भाषा के कारण रुहेलखण्ड में उनकी रामायण को अधिक प्रसिद्धि मिली। उस समय तक उत्तर भारत के अधिसंख्या वर्ग की भाषा उर्दू थी। उर्दू मिश्रित खड़ी बोली की रामायण जन-जन तक पहुँच चुकी थी। वाल्मीकि कथा को जन भाषा में लिख कर जो कार्य गोस्वामी तुलसीदास ने किया। उसकी कथा को खड़ी बोली में लिखकर पं. राधेश्याम कथावाचक ने जन-जन तक पहुँचाया। लंका-काण्ड (संस्करण सन् 1916 में) में उर्दू मिश्रित भाषा का उदाहरण–

'अलकिस्सा फौरन वहीं हुक्म घिता का मान।
चला फौज के साथ ले मेघनाद बलवान॥
इधर दूर से देखकर हँसे पवन के पूत।
ताड़ लिया अब की दफ़ा आता है यमदूत॥'

(पृष्ठ 6 संस्करण सन् 1916)

सीता की खोज (किष्किन्धा-काण्ड) सुग्रीव मित्रता की कथा के पश्चात सुग्रीव राज प्राप्त पश्चात की कथा है। नए संस्करण में (पृष्ठ 19) तथा पुराने संस्करण में पर्याप्त भेद है। पुराने संस्करण में—

'राम मिला सुग्रीव को हुआ तिहाई साल।
रामचन्द्र के काम का रहा न उसे ख्याल॥'

नए संस्करण में यह क्रम पृष्ठ 20 से प्रारम्भ हुआ है। नए संस्करण में निम्न पंक्तियाँ मुद्रित नहीं है—

'यह सुनते ही हो गए सीधे सरल स्वभाव।
आया राधेश्याम तब सच्चा भक्ति भाव॥'

(संस्करण सन् 1916 अंतिम पृष्ठ)

राधेश्याम कथावाचक ने राम-लक्ष्मण के विनोद माध्यम से सीता-सौन्दर्य का वर्णन किया है—

'सीता को समझो मूल रकम,
और इसको ब्याज समान कहो।

* * *

जब यह हो चुका विनोद खत्म राधेश्याम।
नित्य नेम कर गुरु ढिंग आए लक्ष्मण-राम॥'

सुन्दर काण्ड (अशोक वाटिका कथा खण्ड) का प्रकाशन सन् 1916 में कॉरनेशन प्रेस, आगरा से मुद्रक ब्रजनाथ शर्मा के मार्गदर्शन में हुआ था। कथा प्रारम्भ में पर्याप्त भेद है। अंतिम पृष्ठ पर शुद्धि-पत्र प्रकाशित हुआ है। यह कथा आश्विनी संवत् 1965 में लिखित है।

राधेश्याम रामायण अपनी अनूठी शैली, सरल भाषा, अर्थ ग्राह्य क्षमता तथा प्रचलित कहावतों-मुहावरों के कारण लोकप्रिय है—

'जब मैंने तेरा नाम लिया, तो उसने मुझको दी गाली।
मेरे कान कतर डाले, मेरी यह नाक काट डाली॥
मेरी नाक गयी सो गयी, अब अपनी नाक संभालो तुम।
जग में यदि नाक नहीं तो नकटा नाम धरालो तुम।

(पंचवटी कथा खण्ड से)

पं. राधेश्याम कथावाचक के नए संस्करण में अनेक भूलें हुई हैं। यथा अहिरावण वध कथा खण्ड के मूल लेखक पं. रामनारायण पाठक के स्थान पर पं. राधेश्याम कथावाचक का नाम प्रकाशित है। इसी प्रकार रामायण में प्रकाशित रामचरित्र की कथाओं (सीता वनवास, रामाश्मेघ, लव कुश की वीरता, सतवन्ती सीता की विजय) के मूल लेखक पं. राधेश्याम कथावाचक हैं और नाम प्रकाशित किया है पं. मदनमोहन शर्मा का।

पं. राधेश्याम कथा शैली पर केन्द्रित राधेश्याम पाराशर की पुस्तक तर्ज राधेश्याम पुस्तके बाजार में बिकने के कारण कथावाचक की पुस्तकों पर सन् 1978 से ग्रन्थों के पीछे पं. गिरीचन्द्र शर्मा का चित्र प्रकाशित किया जाने लगा है, ताकि पाठक नकली ग्रन्थों से बच सकें।

अपने नाम कथावाचक की सार्थकता के विषय में उन्होंने लिखा— 'जब मैंने होश संभाला तो रंग बदला हुआ था चौबोला,

लावनियाँ आदि का चलन था। भाषा मिली-जुली, गिरी-पड़ी मिश्रित और सरल थी। इसके कुछ ही दिनों पश्चात पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने उमंगे बढ़ा दीं..... मेरी रामायण सामयिक भाषा में होने के कारण चल पड़ी। कथा और 'वाचक' दोनों को मिलाकर 'कथावाचक' मैंने ही अपनाया और राधेश्याम के आगे जोड़ लिया। गुरु पूर्णिमा संवत् 2011।'

व्यवसायिकता की अंधी दौड़ में कथावाचक जी के मरणोपरान्त (26 अगस्त 1963) राधेश्याम प्रेस बन्द हो गया। उनकी कृतियों का प्रकाशन रायल्टी के आधार पर अन्यत्र होता है। वे आज नाम मात्र से जीवित है। उनकी पहचान कें नाम पर बरेली में राधेश्याम कथावाचक मार्ग ही है और कोई मूर्ति नहीं। दैनिक 'आज' के गिरिजेश राय का एक आलेख छपा था। उसमें उनकी कर्मस्थली को बेचने की चर्चा है। पं. राधेश्याम कथावाचक की स्मृति शेष के विषय में न तो उनके परिवार से कोई पहल की गई है और न स्थानीय या प्रदेश सरकार इस हिन्दी साहित्य सेवी के प्रति जागरूक है। आज उनकी पहचान ख़तरे में है।

नव भारत टाइम्स
16 मार्च, 1996

पं. राधेश्याम कथावाचक व्यक्ति नहीं संस्था थे

बरेली में 25 नवम्बर 1890 ई को पंच राधेश्याम कथावाचक जी का जन्म एक गरीब ब्राह्मण परिवार में हुआ था। यह नाम हिन्दी साहित्य की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि बना। प्रतिभा के धनी कथावाचक जी ने लगभग 50 ग्रन्थों का सृजन-सम्पादन कार्य किया। रामायण की कथावाचकीय शैली उनकी कृतियों में एक नये रूप में ढ़ली। 'दिवंगत हिन्दी सेवी' (भाग-1) नामक ग्रन्थ में श्री क्षेमचन्द्र सुमन ने पं. राधेश्याम कथावाचक के कृतित्व-व्यक्तित्व पर विस्तार से प्रकाश डाला है। 'राधेश्याम कीर्तन' ग्रंथ में स्वयं कथावाचक जी लिखते है - ''मुझे बाल्यावस्था से मेरे पूज्य पिता पं. बाँकेलाल जी ने गायन, हारमोनियम और कथा का अभ्यास कराया था। मेरी अवस्था 12 वर्ष की थी। तब मेरे पिता के सद्गुरु 108 स्वामी रामदास जी का काशी से बरेली आगमन हुआ। उसी समय मुझे तुकबन्दी का शौक लगा। स्वामी जी के शरीर शान्त होने के साथ मुझे कृष्ण प्रेम की ओर झुकाव हुआ। उन्हीं दिनों नाटकों की तर्ज पर 'राधेश्याम विलास' पुस्तक लिखी। धीरे-धीरे रामचरित्र को छन्द में बनाना प्रारम्भ किया। क्रमशः रामभक्ति बढ़ी। श्रोताओं को रामायण भी रुचिकर लगी।''

कथावाचक रूप में– पं. राधेश्याम कथावाचक ने होश संभालते ही तुलसीकृत मानस का पूरा स्वाध्याय कर लिया था। तभी से आप रामकथा वाचन तथा देशाटन करने लगे। आनन्द भवन इलाहाबाद, काशी विश्वनाथ मन्दिर, हरिद्वार, दिल्ली आदि नगरों में आपने तबले, हारमोनियम पर रामकथा द्वारा तुलसी के राम को अपने शब्दों में जन-जन तक पहुँचाया। रामकथा के क्षेत्र में जो कार्य महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामायण द्वारा किया और तुलसी ने उसे रामचरितमानस के माध्यम से लोकमंगल की भावना का आधार बनाया, पं. राधेश्याम कथावाचक ने उसी रामायण को

खड़ी बोली में लिखकर राम को जन-जन तक पहुँचाया। अत: 'वाल्मीकि तुलसी भयो, तुलसी राधेश्याम।' सन् 1910 के आस-पास उनकी रामायण का प्रकाशन मुरादाबाद से हुआ। इस काल की प्रति मेरे पास सुरक्षित है। सन् 1921 ई. में राधेश्याम प्रेस से इसका प्रकाशन प्रारंभ हुआ। श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने लिखा– "जब राधेश्याम रामायण जन-साधारण में लोकप्रियता के शिखर को छू गयी तब उन्होंने रामायण की तर्ज पर अन्य ग्रंथ लिखे।"

पं. राधेश्याम रामायण के नवीन संस्करण में लव-कुश की वीरता; सीता वनवास; रामाश्वमेव; सीता विजय आदि खण्ड पं. मदन मोहन लाल शर्मा द्वारा रचित है। यह राधेश्याम जी के अनुज थे। रामायण हिन्दी-उर्दू में प्रकाशित होती थी। राधेश्याम रामायण में अर्थ के लिए कोई स्थान नहीं। मुहावरे युक्त खड़ी बोली में 'पंचवटी' का एक अंश–

"जब मैंने तेरा नाम लिया, तो उसने मुझको दी गाली।
मेरी नाक कतर डाली, मेरी यह नाक काट डाली॥
मेरी नाक गयी सो गयी, अब अपनी नाक संभालो तुम।
जग में जब ऊँची नाक नहीं, तो नकटा नाम धरा लो तुम॥"

पं. राधेश्याम रामायण के सन् 1933 एवं 36 के दो संस्करण भी मेरे पास हैं।

काव्य पंडित कवि रत्न : 'भ्रमर गीत माला' में भ्रमर मासिक पत्रिका के अंकों की चुनी हुई कविताओं का संग्रह पं. राधेश्याम ने सम्पादित किया था। मीठी गुंजार; मधुर मुरली; रसीली तान; कुसुम कुंज; वसनत वाटिका व पदम पराग खण्डों में प्रकाशित इस ग्रंथ का मूल्य 1954 ई. में पिचत्तर पैसा था। पदमपराग काव्य की भूमिका से पता लगता है कि 'भ्रमर' मासिक 1930 में बन्द हो गया था।

'राधेश्याम गीतावली' का मूल्य 1950 में चार रुपया था। इस ग्रन्थ की प्रस्तावना पं. भोलानाथ शर्मा ने लिखी है– "कविरत्न पं. राधेश्याम कथावाचक ने अपने गीतावली जनता के हृदय में रमने वाले 'जनता जर्नादन'– अपने इष्टदेव भगवान राम को अर्पित की है। इसकी

अपनी अलग शैली है। पं. राधेश्याम कथावाचक के पूज्य गुरु पं. मदन मोहन मालवीय जी को यह ग्रंथ समर्पित है। गीतावली का श्री गणेश गणेश वन्दना से होता है। हर गीत के पीछे छिपी अभिव्यक्ति कवि ने निज अनुभवों में व्यक्त की है। 'जय गन नवभारत निर्माता' गीत आपने 15 अगस्त 1947 में लिखकर उसे 'महात्मा गाँधी' को नोआखाली के पते पर प्रेषित किया। व्यस्तताओं के कारण विलम्ब से उत्तर आया– "कविता मिली। सुन्दरा है, घनश्याम अब कैसा है ? तुम अब उसकी बीमारी में संभाले रखना। तुम तो देश की चीज हो।" कविता थी–

"जय जय भारत निर्माता
कोटि-कोटि कण्ठों से भारत-नाम तुम्हारा गाता
जय-जय नव भारत निर्माता

× × ×

रामकृष्ण बुद्धादिक ने-ज्ञानामृत हमें पिलाया।
तुमने 'मोहन' ऐसा 'मोहा'-जीवन नया बनाया।।
राधेश्याम लेखनी का भी, मस्तक झुक जाता।
जय-जय नव भारत निर्माता।।"

नेपाल सरकार ने उन्हे 'कथावाचस्पति' से अलंकृत किया था।

कृष्ण भक्त कवि– रामायण की तर्ज़ पर **'कृष्णायन'** पं. राधेश्याम कथावाचक की महत्त्वपूर्ण कृति है। भूमिका में आपने लिखा– "राम चरित्र जितना सुलझा हुआ है, कृष्ण चरित्र उतना ही उलझा हुआ है।" यह श्रव्य काव्य है। इसमें जन्माष्टमी; नन्द महोत्सव; कमलीवाला कन्हैया; गिरधरधारी; रास रहस्य; कंस वध व नन्दनन्दन वसुदेव नन्दन, सात कथा खण्ड हैं। इस ग्रन्थ की कविता "देवकी का स्वप्न" शीर्षक से गीताप्रेस गोरखपुर से श्रीकृष्ण अंक वर्ष 1931 में प्रकाशित हुई थी। इस काव्यांश में कृष्ण जन्म की परिस्थितियों का चित्रण है। देवकी कैद भारत माँ है। अत: 'नीचे या लाल रक्त सागर, जिसमें सब सृष्टि धंस रही थी।' कृष्ण गाँधी का प्रतीक हैं। 1931 में भारत में गाँधी जन-जन के नायक बन चुके थे। अत: भारतीय राजनीति में गाँधी का अवतरण कुछ ऐसा ही

था– 'इतने में उस मूर्ति ने बढ़ा दिया आकार, वह बढ़ती थी, हो रहा था छोटा संसार।' सभी जानते हैं भारतीय राजनीति सलाखों के पीछे पुष्ट हुई है। अतः कारागार में कृष्ण जन्म की सार्थकता– 'हे कारागृह की तपस्विनी, मैं अष्टम् लाल तुम्हारा हूँ।' श्री क्षेमचन्द सुमन ने **कृष्णायन** की चर्चा में कहा था– "आज हिन्दी में पाँच कृष्णायन हैं। इनमें कथावाचक जी का 'कृष्णायन' भाषागत् व साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।"

'राधेश्याम कीर्तन' प्रथम संस्करण सन् 1910 में प्रकाशित हुआ था। आपने निवेदन में लिखा– श्रेष्ठ गायन से विचार होगा, विचार होने से विकार का नाश होगा, विकार नाश होने पर परमात्मा में मन लगेगा, परमात्मा में मन लगने पर 'निजानन्द' को प्राप्त हो जायेंगे।" इस ग्रन्थ का पंचम संस्करण मेरे पास सुरक्षित है। इसमें 101 गायन हैं। ईश्वर भक्ति, स्त्री सुधार, समाज सेवा तथा राष्ट्रीय विषयों के इसमें गीत हैं। एक उदाहरण–

"हे झूठे धाम गाम वाम।
ऐसी देह फिर न मिलै, भज हरि का नाम।।
जागो- जागो मोह त्यागो होने आयी शाम।
सोते-सोते उम्र बीती जाग 'राधे श्याम'।।"

वस्तुतः उनके नाम के आगे लगा कथा+वाचक शब्द उनके व्यक्तित्व का पर्याय है। बिना इसके उनकी पहचान अधूरी ही रहेगी। काशी नागरी प्रचारिणी सभा में उनके जन्मशती समारोह में डॉ. कैलाश नाथ तिवारी ने कहा– नाटककार के रूप में कथावाचक शब्द से राधेश्याम की पहचान को खतरा है। आगा हश्र के भतीजे आगा जमाल कश्मीरी तथा काशीनाथ शर्मा सहित सभी विद्वानों ने उनके नाम के आगे लगे कथावाचक शब्द को सही करार दिया। पं. राधेश्याम ने स्वयं 'कथावाचक' शब्द को अपने व्यक्तित्व का पूरक माना है।

प्रतिभा के धनी पं. राधेश्याम का हिन्दी साहित्य ऋणी रहेगा। आपने रामायण; उत्तर रामचरित्र; राधेश्याम विलास; राधेश्याम कीर्तन; भक्त प्रहलाद; वीर अभिमन्यु परिवर्तन; रुकमणि मंगल; ऊषा अनिरुद्ध; छत्रपति

शिवाजी; कृष्ण सुदामा; पदम पुष्पांजलि; घन्टापन्थ; सेवक रूप में श्रीकृष्ण; शान्ति दूत श्रीकृष्ण; कृष्णायन; मेरा नाटककार तथा राधेश्याम गीतावली की रचना कर साहित्य की श्रीवृद्धि की है। गत दिनों बरेली में आयोजित पं. राधेश्याम जन्म शती के कई आयोजन हुए। प्राय: सभी आयोजन उनकी 'रामायण' के आसपास घूमते रहे। किसी ने उनके बिखरे हुए साहित्य की चर्चा तक नहीं की। नाटककार और कथावाचक के बीच में राधेश्याम जी को खूँटी पर टांग कर शताब्दी वर्ष समाप्त हो गया।

सम्पादकाचार्य : पं. राधेश्याम कोरे कथावाचक ही नहीं एक कुशल सम्पादक भी थे। इसका प्रमाण 1923 ई. में राधेश्याम प्रेस बरेली से **'भ्रमर' मासिका का प्रकाशन** था। भ्रमर के प्रकाशन से उनकी साहित्यिक प्रतिष्ठा बढ़ी। प्रारम्भ में इसका सम्पादक कथावाचक जी स्वयं करते थे। भ्रमण तथा कथा कार्यक्रमों की व्यस्तताओं ने 'भ्रमर' को पं. गोपी वल्लभ उपाध्याय; प्रवासी लाल वर्मा; उदयशंकर भट्ट तथा पं. राम नारायण पाठक जैसे सम्पादक दिये। इस काल में संस्थापक के स्थान पर कथावाचक जी का नाम प्रकाशित होने लगा था। 'भ्रमर' के वर्ष 1928 एवं 29 के अंक मेरे पास हैं। यह प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित होता तथा वार्षिक मूल्य था- चार रुपया। आमुख में यह पंक्तियाँ थीं– "विश्व वाटिका में विचरण कर पाना पुष्पों का मकरन्द/लेकिन भ्रमर भूल मत जाना प्रभु-पद-पंकज का आनन्द/सच्चे सुख का धाम यही है, वहीं ठहरना हो निस्पन्द/राधा माधव की गुण-गाथा, गुन-गुन कर गाना स्वच्छन्द।" भ्रमर 1930 में बन्द हो गया। इसकी सूचना प्रेमचन्द के 'हंस' (प्रथमांक 1930) पत्रिका से मिलती है।

पारसी थियेटर उनका ऋणी रहेगा : पं. राधेश्याम ककथावाचक जी रामायण के आगे उनकी नाट्य प्रतिभा का सही मूल्यांकन आज तक नहीं हो पाया है। प्राय: सभी आलोचकों ने उनकी काव्य प्रतिभा के सामने नाट्य प्रतिभा को नज़र अंदाज कर दिया है। जब तक पारसी थियेटर का मूल्यांकन नहीं हो जाता तब तक हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास अधूरा ही रहेगा। पारसी थियेटर के तीन मोड़ हैं – आगा हश्र कश्मीरी (बनारस);

पं. बेताव नारायण प्रसाद तथा पं. राधेश्याम कथावाचक (बरेली) है। इन्हें पौराणिक, रोमानी और पुनरुत्थानवादी नाटककाल भी कहा जा सकता है। पं. राधेश्याम कथावाचक ने लोक प्रचलित नाट्य शैलियों; रामलीला; नौटंकी; ढ़ोलामारू, तथा पारसी थियेटर के मिश्रित स्वरूप को पौराणिक कथानकों के माध्यम से प्रस्तुत कर नाटकों में आयी अश्लीलता, फूहड़पन को दूर कर परिमार्जित करने का प्रयास किया है। ऐसा कार्य तत्कालीन किसी नाटककार ने नहीं किया, जिसे उन्होंने कर दिखाया। पहली बार लोगों ने समझा कि नाट्यशाला तक महिलाओं के साथ जाया जा सकता है।

नाटककार : ईश्वर भक्ति; श्रीकृष्णावतार; वीर अभिमन्यु; परमभक्त प्रहलाद; श्रवणकुमार; परिवर्तन; महर्षि वाल्मीकि; रुकमणि-कृष्णद्ध सती-पार्वती; देवर्षि नारद; मशीरिकी हूर; भारत माता, कृष्ण-सुदामा; शान्ति के दूत श्रीकृष्ण; सेवक के रूप में श्रीकृष्ण; घन्टापंथ, नाट्य रामायण आदि आपके चर्चित नाटक हैं।

'भ्रमर' के पूर्व सम्पादक पं. गोपी वल्लभ शास्त्री ने सस्ता साहित्य मण्डल अजमेर की पत्रिका 'त्याग भूमि' के 1929 ई. के अंकों में श्रवण कुमार; ईश्वर भक्ति; वीर अभिमन्यु; श्रीकृष्णावतार, द्रोपदी स्वर तथा मर्शर की हूर नाटकों की विशद समीक्षा प्रस्तुत की है। समीक्षा नाटकों की सही सूचना देती है। कथावाचक जी ने सभी नाटक न्यू अल्फ्रेड थिएट्रिकल कम्पनी ऑफ बम्बई के लिये लिखे।

कथावाचक जी का चर्चित नाटक 'श्रवण कुमार' न्यू अल्फ्रेड कम्पनी से पूर्व सुर विजय नाटक समाज द्वारा खेला जाता था। वर्ष 1926 के निवेदन में आपने नाटक की रचना प्रेरणा पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उनकी मान्यता है कि नाटककार नाटक लिखते समय कल्पना के बिना पूरा कठिन है। यह नाटक टेहरी नरेश नरेन्द्र शाह को समर्पित है। भूमिका में पं. द्वारिका प्रसाद ने सटीक जानकारी दी है। नाटक का उद्देश्य नट के माध्यम से—

पड़के कुसंगति में जो करे अपमान माँ-बाप का।
मुँह देखकर पत्नी का छोड़े जो माँ-बाप का।।
उनको बताना है हमें सन्तान का क्या कर्म है।
कर्त्तव्य पत्नी का है क्या और पुत्र का क्या धर्म है।।

'ईश्वर भक्ति— भौतिकवादी भारतीयों को ईश्वर मार्ग स्मरण दिलाने के उद्देश्य से लिखा गया भक्त राज अम्बरीष का नाटक। एक गायन में–

भारत वालों फिर से भारत में लहराई ईश्वर भक्ति।
भारत के बच्चे-बच्चे को फिर भाये ईश्वर भक्ति।।

न्यू अल्फ्रेड कम्पनी के लिये आपने लिखा द्रोपदी स्वयंवर 'श्रीकृष्णावतार'– दर्शकों पर अपना-अपना प्रभाव डालने के लिये हमें वही भाषा प्रयोग में लानी चाहिये जो इस समय बोल-चाल की भाषा है। नाटक पाठ्यकाव्य नहीं, श्रव्य-दृश्य काव्य है। प्रेम भक्ति रस युक्त महापुरुष के आदर्श चरित्र की प्रवृत्ति ही उद्देश्य–

रंग स्थल में ऐसा गूंजे गिरवरधारी ब्रजराज की जय।
दर्शक मण्डली पुकार उठे श्रीकृष्ण चन्द्र महाराज की जय।।

वीर अभिमन्यु' के सन्दर्भ में कथावाचक जी लिखते हैं– 'इस नाटक को लिखते समय मुझे मुरादाबाद के शालग्राम वैश्य के 'अभिमन्यु' नाटक से पर्याप्त प्रेरणा मिली है।' यह नाटक न्यू अल्फ्रेड कम्पनी के लिए लिखा गया था। आगे प्रथमांक में आपने लिखा– 'अपने पूर्व के नाटकों में आयी अश्लीलता के प्रति चिन्ता व्यक्त की है। नटी-हमें किसी श्रेष्ठ नाटक ो लेखने का विचार करना चाहिए। मनोरंजन के साथ ही अपने देश और समाज का भी उपकार करना चाहिए नट–आज भारत के गौरव को दिखाने के लिए बरेली पं. राधेश्याम कथावाचक की लेखनी से लिखा हुआ वीर अभिमन्यु नाटक रचाया जाए। शृंगार रस के स्थान पर करुण रस का नाद बहाया जाए कुछ इस प्रकार–

उबल-उबल कर रो पड़े अपना रसिक समाज।
अभिमन्यु नाटक करो भारत के हित आज।।

नट– यह हिन्दू नाटक है। इसमें हिन्दी भाषा ही प्रधान है। पात्रों को समझा देना हाव-भाव और उच्चारण में हिन्दी और हिन्दू गीत की प्रतिष्ठा का ध्यान रहे–

भारत वीरों की याद में गाना भी रोना है।
पानी ही नहीं है मात्र आँसुओं से मुँह धोना है।।

अभिमन्यु देश आजादी के लिए दी गयी शहादतों की याद दिलाता है। युवा आक्रोश और शक्ति का प्रतीक भारत माँ का रक्षक अभिमन्यु।

'श्रवण कुमार'– यह कथावाचक जी का द्वितीय नाटक है। इस सन्दर्भ में पं. गोपी वल्लभ शास्त्री ने लिखा– 'इसका मूल कथानक जहां त्रेतायुग का चुना गया है वहीं प्रहसन की कल्पना इस युग के अन्धपत्नी भक्त के रूप में की गई है। दोनों युग के आदर्शों को नाटककार ने सामने रखकर उनमें से श्रेष्ठ और वास्तविक चुनने का मौका दिया है।' **'भक्त प्रहलाद'** के कथानक को कथावाच जी ने सन् 1920 के सत्याग्रह तथा असहयोग आन्दोलन की घटनाओं का बखूबी संकलित किया है। पं. मदन मोहन मालवीय इसे देखकर धन्य ! धन्य ! ! ही कहा था। राधेश्याम जी ने स्वयं इसे चालीस बार देखा। यद्यपि यह 1920 में लिखा गया इसमें आज भी ताजगी है।

'ऊषा अनिरुद्ध' पण्डित जी का चौथा नाटक है। इसकी रचना 1924-25 ई. में हिन्दू संगठन की धूम के समय हुई। इसमें आपने वैष्णव-शैव झगड़ों को, हिन्दू अहिन्दू के संघर्ष को सुन्दरता से दिखाया है। छैलबिहारी कपूर ने इस नाटक की आलोचनात्मक भूमिका लिखी है। नाटक का कथानक शोषिणपुराधीश वाणासुर की कन्या ऊषा और श्रीकृष्ण चन्द्र के पुत्र अनिरुद्ध के स्वप्न दर्शन, बन्दीकरण और अन्त में यादवों द्वारा युद्ध होकर ऊषा अनिरुद्ध का विवाह की घटना है। प्रकाशन की दृष्टि से पाँचवा नाटक 'परिवर्तन' नशा-वैश्यागामी प्रवृत्तियों को लेकर लिखा गया है। भूमिका में पं. विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक ने उन्हे सफल नाटककार माना है। **'मशरिकी हूर'** इसे आपने बोलचाल की उर्दू भाषा में लिखा है। माधव

प्रसाद शुक्ल द्वारा लिखित नाटक की भूमिका नाटक को समझने में सहायक है। मुख्य पृष्ठ पर हमीदा का तिरंगा चित्र छपता था। मूल्य था- एक रुपया।

वस्तुतः पण्डित राधेश्याम कथावाचक ने पौराणिक नाटकों द्वारा जन-साधारण की सोच को परिष्कृत-परिमार्जित करने का कार्य गाँधी, मदन मोहन मालवीय की विचारधारा को ध्यान में रखकर किया। गत् दिनों काशी नागरी प्रचारिणी सभा के तत्वाधान में पण्डित राधेश्याम जन्मशती समारोह में क्षेमचन्द्र सुमन, चिरंजीत, आगा जमाल कश्मीरी तथा नर्मदेश्वर आदि विद्वानों ने उनकी नाट्य प्रवृत्तियों के पुर्नमूल्यांकन की आवश्यकता पर बल देते हुए उन्हें पुनरुत्थानवादी पारसी थियेटर का जनक सिद्ध करने की कोशिश की। 'भ्रमर' के मार्च 1929 के अंक में पण्डित जी के नाटकों के प्रति ओछे विचार रखने वालों की अच्छी खबर ली है। इलाहाबाद से प्रकाशित भारतेन्दु पत्रिका में प्रकाशित अन्निप्रसाद के लेख "कथावाचक की करतूत" पर पण्डित रामनारायण पाठक ने सटीक टिप्पणी लिखी है। सरस्वती, आज, ट्रिब्यून, वेंकटेश्वर, सुधा तथा प्रताप आदि पत्रों में नाट्य चर्चा है।

वे एक संस्था थे– पण्डित राधेश्याम कथावाचक एक व्यक्ति नहीं संस्था थे। आपके सानिध्य में महाभारत; दुर्गाचरित्र तेगेसितम; सत्यवादी हरिश्चन्द्र; भगवतगीता; सतलड़ी; गीतावली ध्रुवचरित्र; मुसाफिर की डायरी आदि ग्रन्थों का सम्पादन कार्य सम्पन्न हुआ। जगन्नाथ मिश्र कमल; पण्डित माधव प्रसाद शुक्ल; पण्डित ज्वाला प्रसाद मिश्र; पण्डित मदन मोहन; सहाय तमन्न; पण्डित खुशी राम शर्मा; ललित गोस्वामी; सीताराम सेठ; पण्डित गोपी वल्लभ शास्त्री; चन्द्रनारायण सक्सेना; उदय शंकर भट्ट; नत्थू लाल अग्निहोत्री 'नम्र' तथा पण्डित रामनारायण पाठक ने आपकी काव्य प्रतिभा का अनुसरण कर राधेश्याम स्कूल (कथावाचक स्कूल) को समृद्ध किया है।

परिवार में– खेदपूर्वक लिखना पड़ रहा है कि कुशल नेतृत्व के अभाव में, व्यावसायिकता की अंधी दौड़ तथा सामयिकता का गलत

मूल्यांकन करन के कारण पं. राधेश्याम कथावाचक को भुलाने का उपक्रम जारी है। आज राधेश्याम प्रेस, बरेली बन्द हो चुका है। उनकी कृतियों का प्रकाशन अन्यत्र रायल्टी के आधार पर किया जा रहा है। प्रकाशन पर मुद्रक क स्थान पर पं. गिरीश चन्द्र शर्मा का नाम प्रकाशित होता है। पं. राधेश्याम आज नाम मात्र से जीवित हैं। उनके परिवार में व्यक्त मतभद कथावाचक जी के जन्मशती-समाराह में स्पष्ट सामने अनुभव होते थे। पं. राधेश्याम कथावाचक जी के दो पुत्र थे– पं. घनश्याम शर्मा तथा पं. बलराम शर्मा। घनश्याम जी के पुत्र काशीनाथ शर्मा बरेली के अच्छे उद्योगपति हैं। बलराम शर्मा के पुत्रों में- जगदीश शर्मा; योगेश चन्द्र शर्मा; गिरीश चन्द्र शर्मा तथा गोपाल शर्मा हैं। प्रकाशन कार्य मात्र गिरीश चन्द्र शर्मा की देखरेख में चल रहा है। मई 1991 में हुई बरेली की मुलाकात में गिरीश चन्द्र शर्मा ने प्रकाशन में हुए अनेक बिखराव तथा समस्याओं की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया। प्रसंगों को सुनर दिवंगत पं. राधेश्याम कथावाचक (26 अगस्त 1963 ई.) को स्वर्ग में कष्ट अवश्य हुआ होगा। इस दिव्य आत्मा को मेरा शत्-शत् नमन्। बरेली नगर में उनककी कोई प्रतिमा नहीं है। हाँ ! नगर महापालिका ने उनके निवास की सड़क का नाम राधेश्याम कथावाचक मार्ग अवश्य रख दिया है।

संगम मासिक : नई दिल्ली
अप्रैल 1992

जब कर्पूर चन्द्र कुलिश ने उत्तरा की भूमिका निभाई

पत्रकार जगत के गौरव सुप्रसिद्ध हिंदी समाचार-पत्र 'राजस्थान पत्रिका' के संस्थापक-संपादक कर्पूर चन्द्र कुलिश ने भी पं. राधेश्याम कथावाचक के नाटक में काम किया था। अपने संस्मरणों में उन्होंने कहा है– बचपन की बात है या कहूँ कि किशोर अवस्था की बात। 55 साल से ज्यादा हो गए। मालपुरा में मिडिल स्कूल में पढ़ता था। कविता पाठ, अंताक्षरी, कीर्तन, नाटक, तमाशे वगैरह में भाग लेने का मुझे शौक हो गया था। पढ़ाई के साथ इन बातों में भी पूरे जोश-खरोश के साथ जुटा रहता था।

मैंने नाटक की बात कह तो दी लेकिन सच्चाई तय है कि कोई अच्छा नाटक नहीं किया या कोई अभिनय ऐसा नहीं किया, जो अभिन्य की परिभाषा में लाया जा सके। शौक भी मामूली नहीं था। नाटक करने का यह शौक जयपुर आने के बाद भी बरसों तक चलता रहा। तीस वर्ष की आयु तक तो मैं मंच पर आता रहा। मालपुरा में उन दिनों मंगलवार को हनुमान जी के मंदिर में रात भर कीर्तन में जमे रहना मेरा नियमित कार्यक्रम था। कीर्तन में एकाध को नाटक-वाटक का भी शौक था और वे बाकायदा मंच पर नाटक खेलने की सोचते रहते। उन्हीं दिनों वहाँ के सरकारी अस्पताल के एक कम्पाउंडर होते थे, जिन्हें मालपुरा वाले कम्पोटर जी बोलते थे। डॉक्टर को डांगदर और अस्पताल को डाकखाना बोला जाता था, क्योंकि वहाँ डॉक्टर बैठता था। उनके घर पर गाना-बजाना होता रहता था। उनके लड़के निकर और लड़कियाँ फॉक्र पहनती थीं, अतः उन्हें अंग्रेजी फैशन वाला समझा जाता था। उनका घर कस्बे के सब घरों से अलग ही माना जाता था। कम्पाउंडर जी के घर में योजना बनी कि पं. राधेश्याम कथावाचक का 'वीर अभिमन्यु' नाटक खेला जाए। योजना पर

काम शुरु हुआ। पात्र जुटाए गए। मुझे दो भूमिकाएँ दी गई। एक उत्तरा की और दूसरी द्रोणाचार्य की। उत्तरा की भूमिका मुझे इसलिए देनी पड़ी कि कोई लड़की नहीं मिल रही थी। कम्पाउंडर जी की लड़कियाँ भी बहुत छोटी थी, मेकअप या वेशभूषा के जरिए मुझे लड़की बनाना मुश्किल नहीं लगा। इतना विचार भी किसको पता था कि पात्र की भूमिका नाट्य-शास्त्र के मापदण्डों पर खरी उतरे। मुझे अपना ही उदाहरण याद है, जब स्कूल के एक सालाना जलसे में मैंने मारवाड़ की महारानी महामाया की भूमिका पाई थी। मुगल ओढ़नी के नाम पर सिर पर रुमाल बाँधा गया और पायजामे को मोरी के नीचे से दोनों पैरों में दो रुमालों से बाँध दिया गया था। स्टूल पर खड़ा करके मैंने प्रजाजनों का आह्वान किया था। नाम से महामाया बना दिया गया और उसे मान लेने का काम दर्शकों पर छोड़ दिया गया। संवाद का स्वर ओजपूर्ण होना ही नाटक का एकमात्र लक्षण था। इसी तरह उत्तरा की भूमिका भी निभाई जा सकती थी। तनिक सुधार अवश्य किया गया। मुगल ओढ़नी की जगह मुगली ओढ़नी ही पहनाई गई। बाल कुछ लंबे थे, उन्हें ज्यों-का-त्यों रहने दिया। ललाट पर बिंदी लगा दी गई। गालों पर कुछ सुर्खी लगा दी। पायजामा हालांकि ओढ़नी में ढँक गया। लेकिन आधी आस्तीन के कमीज की बाहें हाथ ऊँचा करते ही दिखने लगती थी। उत्तरा अभिमन्यु को चक्रव्यूह बेधने के लिए विदा करने वाली थी। रिहर्सल पूरा हो जाने पर नाटक खेलने की तैयारी हुई। मंच के लिए खवास जी के कटले में सीताराम जी का मंदिर चुना गया। मंदिर में ही एक तख्त मिल गया और दरी भी। तख्त के पीछे एक पर्दा दीवार पर टांग दिय गया। पर्दा टांगने की जरुरत मंच की सजावट करना नहीं था बल्कि मंच वाले तिबारे में जमे हुए मंदिर के नौबत-नगाड़ों को ढँकना था।

मंदिर के चौक में जमीन पर दर्शक बैठ गए। तख्ते के नीचे की ओर हारमोनियम और ढोलक लेकर साजिन्दे बैठे। पं. राधेश्याम कथावाचक का नाटक जो था। खेल शुरु हुआ एक गीत के साथ 'भारत वीरों की याद में यह गाना भी रोना है, पानी नहीं है पात्र में आँसुओं से मुँह धोना है।' मुझे ऐसा ही याद है और इतना ही याद है। गाने की तैयारी ठीक-ठाक

की गई थी। गाने के बाद दर्शकों का ध्यान नाटक के प्रति अधिक हो गया।

नाटक शुरु होते ही एक लड़का किताब हाथ में लेकर पिछले पर्दे के पास खड़ा हो गया, जो 'प्राम्प्ट' करता था अर्थात् अभिनेता संवाद भूल जाए तो उसे सहारा दे दे।

मुझे उत्तरा की भूमिका में जो काम खास तौर से करना पड़ा, वह था नारी स्वर उत्पन्न करना। यह काम मैंने कंठ भींचकर बखूबी कर दिया। मुझे अभ्यास भी करवा दिया गया था, परन्तु द्रोणाचार्य की भूमिका में मेरा काम चमक उठा। उसका एकमात्र कारण ओजस्वी स्वर था। एक पद्यबद्ध संवाद का अंश भी मुझे याद है, जो इस प्रकार है–

साक्षी आकाश है पृथ्वी है, पवन है/ मध्यस्थ मेरी बात का यह राजभवन है।

इस भूमिका में द्रोणाचार्य को युद्ध में विजय प्राप्त करने की प्रतिज्ञा करते दिखाया गया है। द्रोणाचार्य के रुप में मुझे दाढ़ी जटा धारण करवाई गई और धोती पहनाई गई। परन्तु स्वर की ओजस्विता ने ऐसी धाक जमाई कि अभिनय के दूसरे सभी पक्ष गौण हो गए।

दोनों भूमिकाओं में पोशाकें बदलने में अलबत्ता फुर्ती करनी पड़ी।

इस नाटक का उपसंहार बड़ा ही दिलचस्प है। अपनी भूमिकाएँ करने के बाद मैं न जाने कब-कैसे सो गया। नाटक समाप्त हो गया। दर्शक और आयोजक सब विदा हो गए। मंदिर के द्वार बंद हो गए। रात को देर तक जब मैं घर नहीं पहुँचा तो मेरी माता जी को चिंता हुई। पिता जी से कहा तो उन्होंने सहज भाव से कह दिया– आता ही होगा। माता जी को तसल्ली नहीं हुई। वे लालटेन लेकर निकल पड़ी। कहीं अता-पता नहीं चला, तो वे मंदिर के पुजारी के यहाँ पहुँची। उनका घर हमारे पड़ोस में ही था। पुजारी को जगाकर वे मंदिर तक पहुँची। सारा मंदिर छान डाला। अकस्मात् उनका ध्यान नाटक के तख्त के नीचे गया। मैं वहाँ सोया हुआ था।

('राजस्थान पत्रिका' के सौजन्य से)

मैं आज जो भी हूँ कथावाचक की ही बदौलत हूँ

पं. राधेश्याम कथावाचक जी ने जब नरसी भगत नाटक का मंचन प्रारम्भ किया तो उनकी नज़र फ़िदा हुसैन पर पड़ी वह कम्पनी की सेवा में था। उन्होंने इस नाटक में फ़िदा हुसैन को 'नरसी भगत' का अभिनय कार्य दिया। उनका अभिनय इतना जीवंत था कि जब भी यह नाटक खेला जाता फ़िदा हुसैन ही नरसी का रोल करते थे। इस नाटक की ख्याति से अभिभूत होकर फ़िदा हुसैन ने अपने नाम के ओ 'नरसी' उपनाम जोड़ लिया। आप पारसी थियेटर के अन्तिम सिपाही थे। आपने इस नाटक में अन्तिम सांस तक अभिनय किया। वर्ष 2004 में जयपुर के रवीन्द्र मंच पारसी नाटकों का मंचन एक सप्ताह तक चला। मुरादाबाद के फ़िदा हुसैन 'नरसी' ने नरसी भगत नाटक में अपने अभिनय से नरसी को जीवंत कर दिया। यहाँ हुई संक्षिप्त मुलाकात में उन्होंने स्वीकार किया कि मैं ''कथावाचक जी की मशाल जलाएँ रखा हूँ, स्वास्थ्य अब साथ नहीं देता। मेरी इच्छा है कि नई पीढ़ी नाटक की बारीकियाँ जाने। थियेटर आज भी थमा नहीं है। उसका बदला हुआ रुप समय की माँग है। लेकिन आज की पीढ़ी में समर्पण कहाँ।'' जब मैं बरेली में था तथा अमर उजाला में छपी खबर ने मुझे बेचैन कर दिया था मुख्य पृष्ठ पर लिखा था– 'फ़िदा हुसैन 'नरसी' नहीं रहे।' यह घटना वर्ष 2005 की है। मेरा नाटक काल में पण्डित राधेश्याम कथावाचक ने फ़िदा हुसैन 'नरसी' का उल्लेख किया है– ''मुरादाबाद के एक लड़का फ़िदा हुसैन मिस्टर माणिक खाँ बलसारा की सेवा में रहता था, उनकी चाय आदि बनाता था। पण्डित जी की नज़र उन पर पड़ी और उन्हें स्टेज एक्टरों में भर्ती कर लिया। उसने दूसरी कम्पनी में जाकर नरसी की भूमिका से विशेष ख्याति अर्जित की बाद में आप कलकत्ता की थियेट्रिकल कम्पनी के डायरेक्टर बने। प्रस्तुत है 'संदर्श' में

प्रकाशित अंश–

वह सन् 1916 का जमाना था। पब्लिक धार्मिक यानी रामायण, महाभारत जैसे सब्जेक्ट्स और उनके कैरेक्टरों पर आधारित ड्रामे ज्यादा पंसद करती थी। उस जमाने में ड्रामा कंपनी का माहौल बहुत साफ-सुथरा होता था और उसमें गज़ब का डिसिप्लिन हुआ करता थ। किसी भी तरह की बेअदबी या डायरेक्टर के हुक्म की उदूली की कोई जुर्रत नहीं कर सकता था। मैंने मुरादाबाद से निकलकर 'न्यू अल्फ्रेड कंपनी' ज्वाइन की। इसमें पहला ड्रामा मैंने 'वीर अभिमन्यु' खेला था। इसका उद्घाटन 1916 में पं. मदनमोहन मालवीय जी ने किया था। मैंने इस कंपनी में करीब बारह-तेरह साल काम किया और गाने के साथ-साथ 'अभिमन्यु', 'महाभारत', 'हरिश्चन्द्र' जैसे सैकड़ों नाटकों में अहम किरदार किए। सन् 1921 में इस कंपनी ने 'भक्त प्रह्लाद' नाटक खेला था, जिसे अहमदाबाद में गाँधी जी ने भी देखा था। इसका एक गाना 'व्रत भंग करेंगे नहीं दुर्वाक्य बोलकर, सह लेंगे जुल्म प्रेम से छाती को खोलकर' गाँधी जी को बहुत पसंद आया था क्योंकि शायद इस गाने के बोल में गाँधी का अहिंसा प्रेम और उनका फलसफा झलकता था।

'जाने क्या-क्या छुपा हुआ सरकार तुम्हारी आँखों में' और 'निर्बल के प्राण पुकार रहे, जगदीश हरे, जगदीश हरे' ये गाने मैंने ड्रामा 'परिवर्तन' और 'ईश्वर भक्ति' में गाए थे, औरन इतने मशहूर हुए थे कि गली-गली में इनके बोल सुना करते थे। 1932 तक लोग मुझे सिंगर और एक्टर के रुप में अच्छी तरह जान चुके थे। मैं 'न्यू अल्फ्रेड कंपनी' में था ही। कंपनी के डायरेक्टर पं. राधेश्याम कथावाचक थे। यह उन्हीं की मेहरबानी थी कि मुझे इस कंपनी में दाखिला मिला। मैंने हमेशा उन्हें अपना गुरु माना है और उतना ही उनका अदब-लिहाज किया है, उनकी दिल से इज्जत की है। आज मैं जो कुछ हूँ पंडित जी की ही बदौलत हूँ। वे बहुत अच्छे इंसान थे ओर उनकी कलम का जवाब नहीं था। 'न्यू अल्फ्रेड कंपनी' में वे ड्रामा लिखते थे और उनका डायरेक्शन भी करते थे। मैं उनके लिखे गानों को अपनी आवाज देता था। आप समझिए कि इस कंपनी में पंडित जी के

नाटक-भजन ही कंपनी की जान थे। तो उन दिनों मेरी आवाज और मेरे गाने पब्लिक बहुत पसंद करती थी। एचएमवी ग्रामोफोन रिकार्ड कंपनी हिंदुस्तान की शायद अकेली ग्रामोफोन रिकार्ड बनाने वाली कंपनी थी। जब मेरी शोहरत इस कंपनी तक पहुँची तो 1932 में मुझे इस कंपनी ने अपना ड्रामा एपाइंट कर लिया। मैंने इस कंपनी में करीब बीस साल काम किया और इस दौरान कंपनी के लिए करीब दो सौ ग्रामोफोन रिकार्ड अपने डायरेक्शन में तैया कराए। आपको मालूम होगा कि इस कंपनी का बनाया एक रिकार्ड 'केवट प्रसंग' जो पंडित राधेश्याम कथावाचक की मशहूर 'राधेश्याम रामायण' से मैंने लिया था, बहुत मशहूर हुआ है। इसमें भी मेरी आवाज है। यह रिकार्ड 1936 में मार्केट में आया था। मेरे साथ एक प्लस-प्वाइंट यह भी था कि मैं रोल करने के साथ-साथ में अपने गाने खुद ही गाता था। मैंने 'दिलजानी', 'मस्ताना', 'मीराबाई', 'इंसाफ की तोप', 'डाकू का लड़का', और 'खुशनसीब' समेत करीब 12 फिल्मों में अहम रोल अदा किए। यह मेरी खुशनसीबी थी कि मुझे मास्टर निसार, के.एल सहगल, कज्जन बाई जैसे कलाकारों के साथ काम करने का मौका मिला, जिनके नाम की पब्लिक दीवानी हुआ करती थी और जिनके नाम की धूम पूरे हिंदुस्तान में मची हुई थी।

उत्तरप्रदेश के मुरादाबाद जनपद निवासी अशोक विश्नोई ने फ़िदा हुसैन नरसी पर एक ग्रंथ का प्रकाशन किया है। जब उनसे मास्टर साहब के विषय में चर्चा चली तो उन्होंने उनकी जानकारी उपलब्ध का भरोसा दिया। लेकिन यह क्रम न बन सका। शोधार्थी उनसे संपर्क कर सकते हैं–09411809222

जब भैरोंसिंह शेखावत अभिमन्यु बने

बात सन् 1940-41 की है, जब भैरोंसिंह शेखावत ऐंग्लो-वैदिक हाई स्कूल जोबनेर (बाद को श्री कर्ण-नरेन्द्र उच्च माध्यमिक विद्यालय) में पढ़ते थे। डॉ. शम्भु सिंह मनोहर के बड़े भाई जीवन सिंह भादवा भी वहीं पढ़ते थे तथा दोनों छात्रावास में साथ ही रहते थे। इस घटना का उल्लेख मनोहर जी द्वारा संपादित 'नरेन्द्र स्मृति ग्रंथ' के 'जोबनेर स्कूल : कुछ पुरानी यादें' में भादवा जी ने स्वयं किया है।

उन दिनों रेडियो, टी.वी आदि मनोरंजन के साधन तो थे नहीं। स्कूलों में, विशेषतः ग्राम्यांचल में स्थित स्कूलों में छात्र 'वीर अभिमन्यु', 'महाराणा प्रताप' जैसे नाटकों का मंचन कर अपना मनोरंजन किया करते थे जिसे देखने हेतु आसपास की ग्रामीण जनता भी उमड़ पड़ती थी। उस साल जोबनेर स्कूल में 'वीर अभिमन्यु' नाटक का मंचन किया गया, जिसमें अभिमन्यु बने थे भैरोंसिंह शेखावत। महाभारत के समान यहाँ भी चक्रव्यूह की रचना की गई, जिसे अभेद्य बनाने में कोई कसर नहीं रखी गई। प्रत्येक मोर्चे पर हट्ठे-कट्ठे 'महारथी' नियत किए गए। उधर अभिमन्यु रुपधारी भैरोंसिह शेखावत भी इस चुनौती का सामना करने ललकारते हुए आ पहुँचे। प्रतिपक्ष की यह घेराबंदी देख उनका जोश जाग उठा। जैसे वीरता का उन्माद उन पर छा गया हो। एक हुँकार के साथ दर्शकों के देखते-देखते चक्रव्यूह में प्रविष्ट हो, उन्होंने एक के बाद एक 'योद्धा' को धराशायी करते हुए चक्रव्यूह का भेदन कर डाला। दर्शक समुदाय उसके इस 'अद्‌भुत पराक्रम' को देख मुग्ध हो गया। तालियों की गड़गड़ाहट और वीर अभिमन्यु की जय-जयकार से सभागार गूँज उठा।

दर्शकों में स्कूल के संस्थापक रावल नरेन्द्र सिंह की दोनों रानियाँ भी अन्य महिलाओं सहित यह नाटक देखने आई हुई थी। वे 'अभिमन्यु' के जीवंत अभिनय से इतनी प्रसन्न हुई कि उन्होंने उन्हें एक स्वर्ण पदक तथा 11/– रुपए पुरस्कार स्वरुप प्रदान किए। उस जमाने में ग्यारह रुपए मायने रखते थे।

('राजस्थान पत्रिका' के सौजन्य से)

पं. राधेश्याम कथावाचक का जन्मशताब्दी वर्ष

पं. राधेश्याम कथावाचक जन्म शती समारोह का आयोजन नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी के तत्वावधान में दिनांक 16 जनवरी 1991 को प्रसिद्ध साहित्यकार पद्मश्री आचार्य 'क्षेमचन्द्र सुमन' के उद्घाटन भाषण से प्रारम्भ हुआ। इस अवसर पर श्री सुमन ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा– "यह आयोजन एक श्राद्ध यज्ञ हैं। आज पं. राधेश्याम कथावाचक जी को हिन्दी कथा जगत भूल चुका है। उनके नाटकों ने साहित्यिक व धार्मिक जगत में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने हिन्दी को नाटकों के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। नाटक जब अपनी शैशवावस्था में था तब आपने पारसी नाट्य शैली के जरिये आपने एक नयी सांस्कृतिक चेतना प्रकट करने का कार्य पण्डित जी ने किया। वे व्यवसायिक रूप से नाटकों में नहीं था। पं. राधेश्याम कथावाचक ने राम कथा के माध्यम से भारत में खड़ी बोली में राम काव्य की रचना करके उसे लोकप्रिय बनाया। आज राम हमारे रोम-रोम में समाये हैं। इसमें जो भावना 'मानस' के माध्यम से तुलसी ने उद्भुत की उसकी अनेक कृलिष्टताओं को आपने 'राधेश्याम रामायण' के माध्यम से दूर किया। मेरा यह सौभाग्य है कि मैं हरिद्वार में 1928-30 के मध्य उनके प्रवचन सुन चुका हूँ। उस समय मैं गुरुकुल विश्वविद्यालय का छात्र था। ग्रीष्म काल में प्रतिवर्ष एक माह के लिए पं. मदन मोहन मालवीय के साथ कथावाचक जी का प्रवचन होता था। राधेश्याम जी की हिन्दी निष्ठा सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी थी। उन्होंने हिन्दी नाटक को एक नये द्वार अपनी नाट्य-शैली के माध्यम से दिए। उन्होंने चर्चा में आगे कहा कि दिल्ली के मोती टाकीज में उनके नाटकों का उद्घाटन पं. मोती लाल नेहरू ने किया। लोग टिकट लेकर उनके नाटक देखा करते थे।"

पं. राधेश्याम कथावाचक रचित 'कृष्णायन' की चर्चा में श्री सुमन ने कहा– "आज हिन्दी में पाँच कृष्णायन हैं। इनमें कथावाचक जी का कृष्णायन भाषागत साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। उनका जीवन धार्मिक

निष्ठा से सराबोर सांस्कृतिक जीवन था। राधेश्याम पुस्तकालय से प्रकाशित 'भ्रमर' मासिक के सम्पादकों में पं. राधेश्याम कथावाचक, पं. गोपी वल्लभ शास्त्री, प्रवासी लाल वर्मा, उदय शंकर भट्ट तथा पं. राम नारायण की चर्चा में आपके साहित्यिक योगदान की चर्चा की! वह न केवल नाटककार, कवि और लेखक थे बल्कि वे अपने को हर कसौटी पर कसने की प्रतिभा रखते थे। श्री सुमन ने जोर देकर कहा रेडियो दूरदर्शन ने स्टेज की लोकप्रियता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। ऐसे में नाटक को पुर्नजीवन प्रदान करने की आवश्यकता है। उन्होंने आशा प्रकट की जिस प्रकार काशी ने साहित्य में एक प्रतिमान स्थापित किया है। उसी प्रकार इस जन्मशती के अवसर पर साहित्यकार उन्हें पुर्नजीवित कर स्थापित करेंगे।"

पारसी रंगमंच के आधार स्तम्भ श्री आगा हश्र कश्मीरी के भतीजे 'आगा जमाल कश्मीरी' ने इस अवसर पर कहा– "नाटकों कों मैं खानों में नहीं बांटता। हिन्दी नाटक के संदर्भ में पारसी रंगमंच को छोड़कर उसका मूल्यांकन संभव नहीं है। उन्होंने अपने पूर्व वक्ता डॉ. कैलाश नाथ तिवारी के इस कथन पर आपत्ति प्रकट की कि श्री राधेश्याम कथावाचक जी के आगे लगे 'कथावाचक' शब्द को हटाने से उनकी पहंचान का खतरा है। यही तो उनकी असली पहचान है। कथा को व्यक्त करने की बखूबी उनके इस नाम कथावाचक में छिपा है। श्री आगा खाँ की नाटक सेवा की चर्चा में आपने कहा कि हमारे पूर्वज एवं श्री कथावाचक जी का नाटककाल एक ही है। कथावाचक जी के नाटकों से पूर्व पौराणिक और धार्मिक नाटक लिख चुके। उन्होंने 13 नाटक हिन्दी में लिखे हैं। भक्त सूरदास उनका पहला नाटक 1914 में श्री आगा हश्र ने लिखा। इसका पहला मंचन कलकत्ता में किया था। हिन्दी ड्रामा को तारीख वार लिखे बिना उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी प्रवक्ता 'डॉ. नर्मदेश्वर राय' ने जन्मशती समारोह में पं. राधेश्याम कथावाचक को एक नाटककार के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। आपने कहा– 'वे एक कवि, नाटककार, कथावाचक तथा गायक थे। उनका स्मरण हिन्दी में नाटककार के रूप में ही करेंगे। सभा के मंत्री जी उन्हें सर्वश्रेष्ठ नाटककार नहीं मानते

हैं। वस्तुत: श्री राधेश्याम कथावाचक पारसी नाट्य के लिए ही जाने जायेंगे। उन्होंने पारसी नाटकों को पौराणिक धार्मिक कथायें इसीलिए लिखी कि पूर्व प्रचलित नाटकों की अश्लीलता को मंच से अलग किया जा सके। अपनी अश्लील नाटकों के कारण 1910 के आसपास पारसी मंच अपनी पहचान खो चुका था। इस अश्लीलता को उन्होंने अपने नाटकों से दूर किया। उन्होंने श्री आगा हश्र की नाट्य शैली से भिन्न, रासलीला, रामलीला तथा लोक नाट्य शैली (नौटंकी के मिश्रित रूप) को पारसी मंच से प्रस्तुत किया। भारत की गौरवमयी परम्परा को आपने 'प्रसाद' के समान ही महिमा मण्डित करने का कार्य पंडित जी ने किया। वस्तुत: पण्डित राधेश्याम कथावाचक ने अपने नाटकों के माध्यम से पारसी मंच में आयी अश्लीलता को दूर किया तथा उसे परिष्कृत किया, तब लोगों ने समझा कि घर की स्त्रियों के साथ भी नाट्यशाला तक जाया जा सकता है। अनेक विवादों के कारण पारसी मंच का मूल्यांकन अभी नहीं हुआ है। इसके पश्चात् जब भी हिन्दी रंगमंच का स्वरूप निर्धारित होगा तभी श्री राधेश्याम कथवाचक जी का मूल्यांकन करना उचित रहेगा।''

डॉ. कैलाश नाथ तिवारी ने श्री राधेश्याम कथावाचक जन्मशती समारोह गोष्ठी चर्चा में कविता (रामायण) और नाटक के बीच यह निष्कर्ष निकाला कि श्री कथावाचक इसमें बीच हाशिये पर आते हैं। देखना यह भी है कि वे जनता के बीच क्यों प्रसिद्ध हैं ? तुलसी-वाल्मीकि की परम्परा में आपकी रामायण सरल सहज है। अत: वे जनकवि हैं। राधेश्याम रामायण के उर्मिला तथा सुलोचना प्रकरणों की चर्चा में आपने कहा कि उन्होंने तुलसी तथा प्रसंगो की रिक्तता को पूर्ण किया। 'कथावाचक' शब्द को रूढ़ अर्थों मं जानने के कारण ही आपने उनके नाम पं. राधेश्याम के आगे लगे नाम 'कथावाचक' को हटा लेने का सुझाव दिया। ताकि लोग उनके साहित्यिक रूप को श्री राधेश्याम रूप में जानें, न कि कथावाचक रूप में।''

इस अवसर पर पं. राधेश्याम कथावाचक के पौत्र 'श्री काशीनाथ शर्मा' भी उपस्थित थे। बरेली से वाराणसी यात्रा की कलान्ति भूलकर आपने बड़े तन्मय होकर राधेश्याम रामायण का सूपनखा संवाद सुनाया था।

इस अवसर पर आपने कहा कि वे एक गरीब परिवार में पैदा हुए

थे। मुझे उनका पौत्र होने का गर्व प्राप्त है। मैं साहित्यकार नहीं हूँ लेकिन मेरा सम्बन्ध एक साहित्यकार परिवार से अवश्य है। मैं उनके पुत्र श्री घनश्याम शर्मा का दूसरा पुत्र हूँ। मेरे दादा ने 'मेरा नाटककार' में श्री आगाहश्र का वर्णन किया है। वीर अभिमन्यु उनका पहला नाटक था। पण्डित जी के 'कथावाचक' नाम हटाने से उनका नाम अधूरा ही रहेगा। हम उनका नाम पं. राधेश्याम कथावाचक ही लेते हैं। 12 से 19 वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने रामायण लिखकर समाप्त कर दी थी। उनकी रामायण में अर्थ निकालने की जरूरत नहीं पड़ती। आखिरी दिनों में उन्होंने में उन्होंने रामायण की कथा वाचना बन्द कर दिया था।

इस अवसर पर प्रसिद्ध नाटककार पद्मश्री चिरंजीत ने समारोह की अध्यक्षता करते हुए जन्मशती समारोह आयोजन के मध्य पं. राधेश्याम कथावाचक को दी गयी मान्यताओं के प्रति सन्तोष व्यक्त किया। आपने कहा– पारसी थियेटर शब्द हिन्दू साहित्यकारों की घृणित भावना से उपजा है। इस स्थिति में उनका नाटककार और कथावाचक का व्यक्तित्व एक-दूसरे का पूरक है। उन्होंने संस्मरण द्वारा यह कहा कि अमृतसर में पंडित जी के नाटकों की जो धूम थी उसे मैंने आँखों से देखा है।

अत: जिस नाटक को जनता पसन्द करे वही सफल नाटक है। पारसी मंच एक सफल रंगमंच था। राधेश्याम कथावाचक पारसी मंच के लिए ही लिखते थे। यह बात दूसरी है कि हिन्दी मंच के साथ उसका विरोधाभास है।''

उक्त कार्यक्रम का प्रारम्भ मंगला चरण से हुआ। प्रारम्भ में ही श्री सुमन ने पं. राधेश्याम कथावाचक के चित्र का अनावरण किया।

सर्वश्री सुधाकर पाण्डेय, करुणापति त्रिपाठी, काशीनाथ शर्मा ने चित्र पर माल्यार्पण किया। नागरी प्रचारिणी सभा के प्रधानमंत्री सुधाकर पाण्डेय ने अतिथियों का स्वागत तथा कार्यक्रम संचालन डा. मोहन लाल तिवारी ने किया था। इस कार्यक्रम में मैं प्रारंभ से अन्त तक रहा तथा अमर उजाला ने रविवारीय अंक में इस गतिविधि को छायाचित्रों सहित प्रकाशित किया था। यह मेरा रोमांचकारी अनुभव था।

दैनिक अमर उजाला, 03 फरवरी 1991 ई.



नाम : **हरि शंकर शर्मा**

पिता का नाम : श्री रामाशंकर शर्मा

जन्मतिथि : 20 जुलाई 1953 (बरेली, यू.पी.)

शिक्षा : एम.ए. (हिन्दी/इतिहास) बी.एड.

पत्र-पत्रिकाएँ : दैनिक जागरण, अमर उेला, स्वतंत्र भारत, आज, राजस्थान पत्रिका, अवकाश, गॉडीव, नवसत्यम, नवभारत टाइम्भ्स, आबजर्वर वीणा, कादम्बिनी, वागर्थ, उत्तरप्रदेश, कथादेश, हिन्दी-दर्शन, आजकल, संगम, सोच-विचार, नमस्कार, डेलीन्यूज, लघुकथा डॉट काम इत्यादि।

ग्रंथ : आजाद हिन्दुस्तान के गुलाम (कहानी-संग्रह), कबीर की बेदाग चादर (गद्य कृति) पत्रकारिता के अछूते प्रसंग (पत्रकारिता), यायावरी के रंग (पर्यटन) पं. राधेश्याम कथावाचक सफ़र एक सदी का, हिन्दी व्याकरण

सन्दर्भ ग्रंथ एवं अभिनंदन ग्रंथों में रचनाएं प्रकाशित हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का संग्रह एवं उन पर लेख प्रकाशित

पुरस्कार :

1. साहित्यश्री; अखिल भारतीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद 2012
2. सेवक स्मृति सम्मान 2013, साहित्यिक संघ, वाराणसी (उ.प्र.)

सम्प्रति : केन्द्रीय विद्यालय में भाषा शिक्षक पद से सेवामुक्त

वर्तमान पता :

प्लाट नं. 213, 10-बी स्कीम, गोपालपुरा बाईपास, जयपुर (राज.) 302018

मोबाइल : 09461046594

Email : harishankersharma53@rediffmail.com


भ्रमर
संस्थापक
पं. राधेश्याम कथावाचक